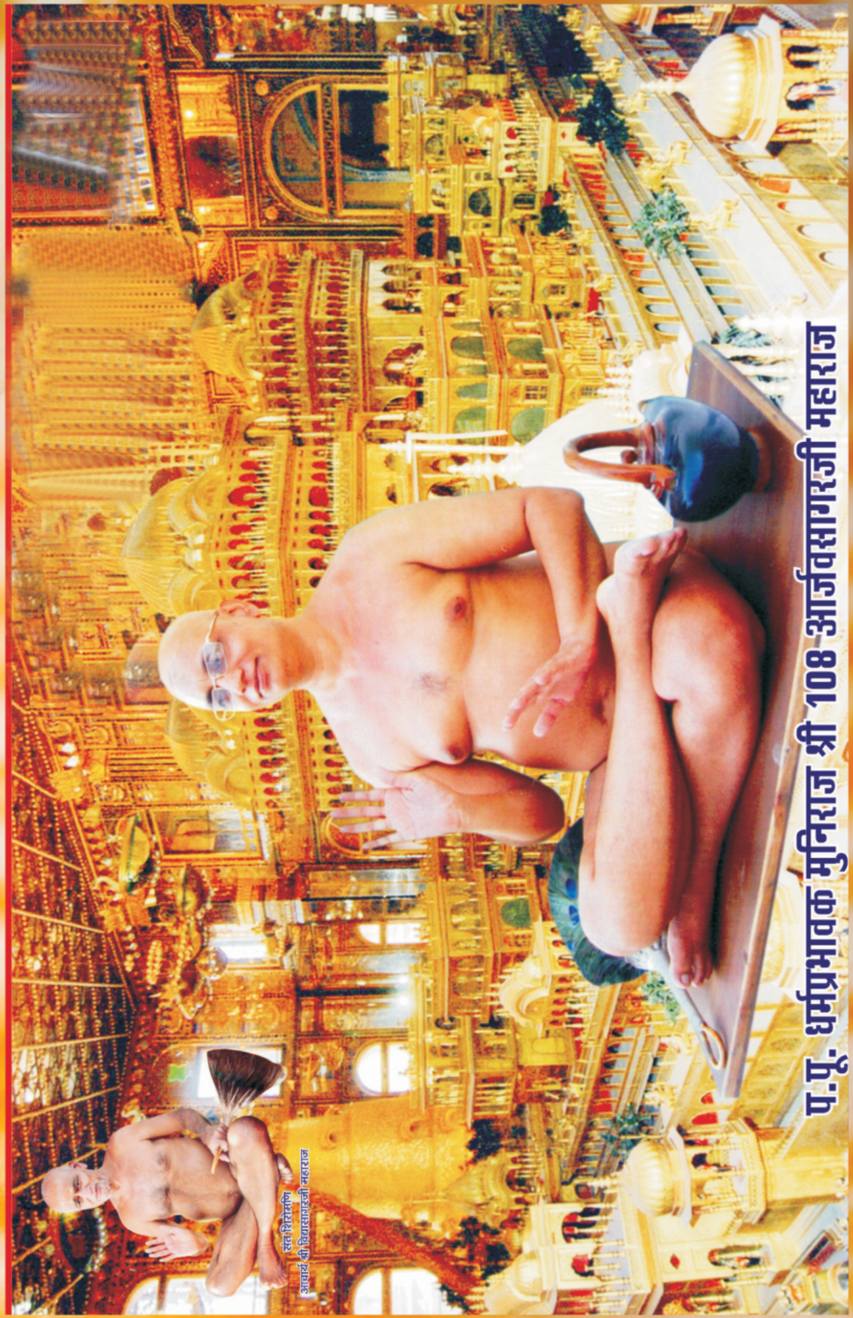

नेक जीवन

लेखक एवं रचयिता

प. पू. मुनि श्री 108 आर्जवसागर महाराज

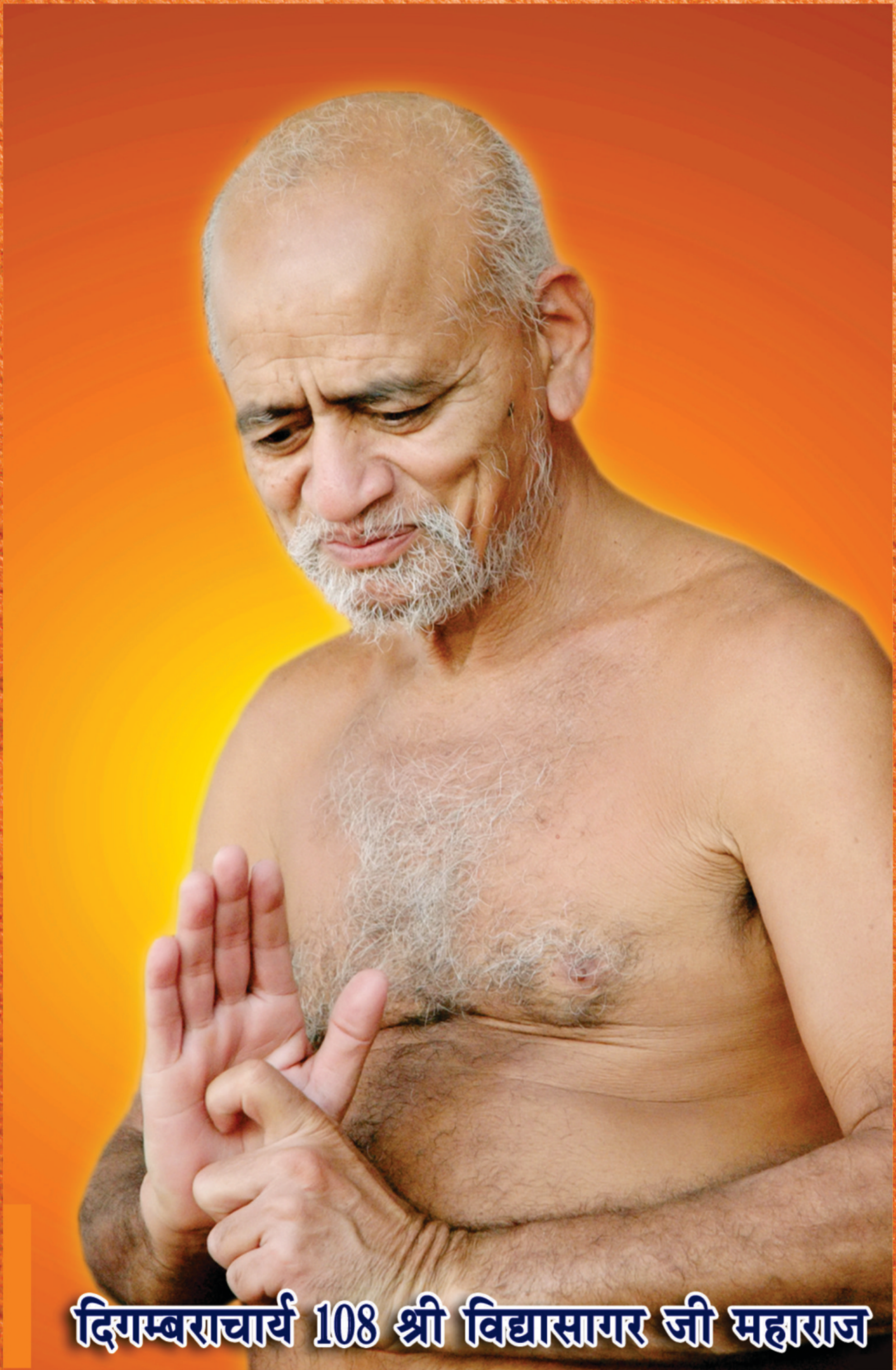

परम पूज्य मुनि श्री १०८ आर्जवसागर जी महाराज का जीवन परिचय

पूर्वनाम	:	पारसचन्द जैन
पिताजी	:	श्री शिखरचन्द जैन
माताजी	:	श्रीमती मायाबाई जैन
जन्मतिथि	:	११.०९.१९६७ (भाद्र शुक्ल अष्टमी)
जन्म स्थल	:	फुटेरा कलाँ, दमोह (म.प्र.)
बचपन बीता	:	पथरिया, दमोह (म.प्र.)
शिक्षण	:	बी.ए. (प्रथम वर्ष)
ब्रह्मचर्य व्रत	:	१९.१२.१९८४ अतिशय क्षेत्र पनागर (म.प्र.)
सातवीं प्रतिमा	:	१९८४, सिद्धक्षेत्र अहार जी
क्षुल्लक दीक्षा	:	०८.११.१९८५, सिद्धक्षेत्र अहार जी
ऐलक दीक्षा	:	१०.०७.१९८७ अतिशय क्षेत्र थूबोन जी
मुनि दीक्षा	:	३१.०३.१९८८ महावीर जयंती सिद्धक्षेत्र सोनागिर जी
दीक्षा गुरु	:	आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज
कृतियाँ	:	धर्मभावना शतक, जैनागम संस्कार, तीर्थोदय काव्य, परमार्थ साधना, बचपन का संस्कार, सम्यक ध्यान शतक, जैन धर्म में कर्म व्यवस्था, नेक जीवन, पर्यूषण पीयूष, अनेक अष्टक एवं हिन्दी, तमिल, कन्नड, मराठी में कविताएँ
पद्यानुवाद	:	गोम्मटेश थुदि, वारसाणुवेक्खा, इष्टोपदेश

नेक जीवन

लेखक एवं रचयिता
प.पू. आचार्य श्री १०८ विद्यासागर जी महाराज
के धर्म प्रभावक शिष्य
प.पू. मुनि श्री १०८ आर्जवसागर जी महाराज

नेक जीवन

मुनि आर्जवसागर

संस्करण	:	सप्तम
प्रतियाँ	:	1000
पावन स्मृति	:	षोडसकारण पर्व - कीर्ति नगर, जयपुर
पुण्यार्जक	:	कन्हैयालाल तेजकरण जैन 215, जौहरी बाजार, जयपुर-302003 फोन :2576621, 2705576 मो.: 9414042256
मुद्रक	:	पारस प्रिन्टर्स 207/4, साईबाबा काम्पलेक्स, जोन-1, एम.पी. नगर, भोपाल फोन : 0755-2574879, 9826240876
प्रकाशक एवं प्राप्ति स्थान	:	**भगवान महावीर आचरण संस्था समिति** एम.आई.जी.-8/4, गीतांजली काम्पलेक्स, भोपाल (म.प्र.) फोन : (0755) 2673820 मो.: 9425601161/9425011357

अनुक्रमणिका

विषय			पृष्ठ क्र.
● मंगलाचरण			
● अपनी बात			
● नेक जीवन के पंच सोपान			
❖ प्रथम सोपान	–	दिनचर्या	1
	◆	देवदर्शन विधि और उसका महत्व	4
❖ द्वितीय सोपान	–	नैतिकता और शिष्टाचार	
	◆	जिन मंदिर संबंधी	13
	◆	जिनेन्द्र भगवान के सामने	15
	◆	शास्त्र विनय संबंधी	17
	◆	साधु संत के सामने	18
	◆	धर्म सभा संबंधी	20
	◆	सामान्य शिष्टाचार	21
	◆	देव दर्शन का फल	26
❖ तृतीय सोपान	–	नियम-दर्पण	28
❖ चतुर्थ सोपान	–	स्तुति	
	◆	गोमटेश प्रार्थना अष्टक	37
	◆	गोमटेश स्तुति पद्यानुवाद	39
	◆	आचार्य कुंद-कुंद स्तुति	41
	◆	आचार्य शांतिसागर विनयाञ्जलि अष्टक	43
	◆	आचार्य विद्यासागर वन्दनाष्टक	45
❖ पंचम सोपान	–	पाठशाला कविताएँ	
	◆	अहिंसा सूत्रगान	47
	◆	हम मोक्ष पायेंगे	49
	◆	जग से पार उतरना है	50
	◆	अहिंसा बोल, जैन धर्म के आठ नियम	51
	◆	जैन गान	52
	◆	जिनवाणी स्तुति एवं गुरु वंदन	53
	◆	पाठशाला हेतु नियम	54
● अतिरिक्त संग्रहीत विषय	◆	भक्ष्य पदार्थों की मर्यादाएँ	56
	◆	सूतक विधि	57
	◆	आरती	58

मंगलाचरण

णमोकार महामंत्र और चत्तारिमंगलादि

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं,
णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाणं,
णमो लोए सव्वसाहूणं ॥

अर्थ : अरिहंतों को नमस्कार हो, सिद्धों को नमस्कार हो, आचार्यों को नमस्कार हो, उपाध्यायों को नमस्कार हो और इस लोक के सभी साधुओं को नमस्कार हो।

एसो पंच णमोकारो, सव्वपावप्पणासणो ।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं होइ मंगलं ॥

अर्थ : यह पंच णमोकार मंत्र सब पापों का नाश करने वाला है और सभी मंगलों में प्रथम मंगल है।

चत्तारि मंगलं – अरिहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं,
साहू मंगलं, केवलि पण्णत्तो धम्मो मंगलं ॥
चत्तारि लोगुत्तमा – अरिहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा,
साहू लोगुत्तमा, केवलि पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो ॥
चत्तारि सरणं पव्वज्जामि – अरिहंते सरणं पव्वज्जामि,
सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि,
केवलि पण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि ॥

अर्थ : लोक के चार मंगल हैं – अरिहन्त मंगल हैं, सिद्ध मंगल हैं, साधु मंगल हैं और केवली द्वारा प्रज्ञप्त धर्म मंगल है।

लोक में चार सर्वश्रेष्ठ हैं – अरिहन्त सर्वश्रेष्ठ हैं, सिद्ध सर्वश्रेष्ठ हैं, साधु सर्वश्रेष्ठ हैं और केवली द्वारा प्रज्ञप्त धर्म सर्वश्रेष्ठ है।

लोक में मैं चार की शरण में जाता हूँ – अरिहन्तों की शरण में जाता हूँ, सिद्धों की शरण में जाता हूँ, साधुओं की शरण में जाता हूँ, और केवली द्वारा प्रज्ञप्त धर्म की शरण में जाता हूँ।

अपनी बात

वह 1 जुलाई 2004 का दिन बड़ा शुभ एवं महत्वपूर्ण था, श्री दिगम्बर जैन मंदिर, टी.टी. नगर, न्यू मार्केट की समाज के लिए जिस दिन प.पू. आचार्य श्री 108 विद्यासागर जी महाराज के धर्म प्रभावक शिष्य प.पू. मुनि श्री १०८ आर्जवसागर जी महाराज का करीब 13 वर्षों की दक्षिण भारत की यात्रा के बाद भोपाल में ससंघ चातुर्मास सम्पन्न हुआ। चातुर्मास में श्रावकों को लगातार धर्म लाभ मिलता रहा। रत्नकरण्डक, वारसाणुवेक्खा, गोम्मटसार और सर्वार्थसिद्धि आदि शास्त्रों का वाचन एवं श्रावक संस्कार शिविर का योग मिला। इसी बीच तीर्थोदय काव्य का सर्वप्रथम प्रकाशन होकर मुख्यमंत्री के करकमलों से विमोचन हुआ। कवि सम्मेलन में कई श्रावकों ने अपने जीवन में पहली बार कविताएँ लिखकर पढ़ीं और धर्मों पर वक्तव्य दिए ऐसे कई धार्मिक अनुभवों का लाभ मिला। इसी श्रृंखला में एक और महत्वपूर्ण अवसर आया है ''**नेक जीवन**'' के प्रकाशन का।

नेक जीवन पुस्तक के प्रकाशन का अवसर भगवान महावीर आचरण संस्था समिति वालों को प्राप्त हुआ है आचरण अर्थात् चारित्रमय जीवन को नेक अर्थात् सुन्दर, स्वच्छ बनाने वाली यह कृति अपनी दिनचर्या, देवदर्शन विधि, नैतिकता एवं शिष्टाचार, नियम-संयम, स्तुति और प्रारम्भिक धार्मिक कविताओं की सुरभि से सबके जीवन को महकाने वाली एक अनुपम कृति होगी और हमारे लक्ष्य को अवश्य प्राप्त कराएगी।

लक्ष्य जैसा होता है, साधन भी उसका वैसा ही होता है। मोक्ष प्राप्त करना हमारा लक्ष्य है, जो कि जीवन की पूर्णता का प्रतीक है। अत: इस साध्य का साधन भी नियमित एवं संयमित होना चाहिए। प्रस्तुत पुस्तक ''**नेक जीवन**'' मोक्ष रूपी साध्य को साधने की दिशा में एक ऐसा ही प्रयास है। प.पू. मुनि श्री आर्जवसागर जी महाराज ने जैन समाज को ही नहीं मनुष्य मात्र को नियमित एवं संयमित जीवन जीने की कला का संदेश प्रस्तुत पुस्तक में दिया है।

''नेक जीवन'' पुस्तक हमें जीवन को सुधारने की दिशा की ओर संकेत करती है। जैन धर्म का अधारभूत तत्व है 'अहिंसा'। इस पुस्तक में हमारे दैनिक जीवन की चर्या के जितने भी सोपान प्रतिपादित किए हैं, उनके मूल में 'अहिंसा' का तत्व विद्यमान है। अर्थात् दैनिक जीवन में हिंसा का परिहार हो, हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिए।

इस पुस्तक का दूसरा मूल उद्देश्य है देव, शास्त्र, गुरु के अवर्णवाद का निराकरण करना। हमारी धार्मिक क्रियाओं में प्राय: कभी-कभी देव, शास्त्र और गुरु का अवर्णवाद होता रहता है। प.पू. मुनिश्री आर्जवसागर जी महाराज ने हमें वे सारी सावधानियाँ ध्यान में रखने की सलाह दी है, जिनके ध्यान में न रखने पर देव, शास्त्र, गुरु की अविनय होती है। तत्त्वार्थ सूत्र में कहा गया है कि देव, शास्त्र, गुरु का अवर्णवाद दर्शनमोहनीय कर्म के बंध का कारण होता है। अत: इस पुस्तक में हमें अपने विवेक को जाग्रत रखने की प्रेरणा मिलती है। जैसा कि 'श्रावक' शब्द में 'श्रद्धा' 'विवेक' और 'क्रिया' समाहित है। वस्तुत: यह पुस्तक श्रावक को सही अर्थों में श्रावक बनाने की प्रक्रिया है। श्रद्धा और विवेक के अभाव में क्रिया सार्थक नहीं होती। आमतौर पर श्रावकों में यही भूल होती है कि वे क्रिया करते समय विवेक को भूल जाते हैं। इस भूल में हम देव, शास्त्र, गुरु की अविनय कर देते हैं। चूंकि यह अज्ञानतावश होता है, परंतु अज्ञानता भी एक अपराध है। यह पुस्तक हमें छोटी-छोटी अज्ञानताओं, भूलों से बचाती है।

इस पुस्तक में इस बात को समझाने का प्रयास भी किया गया है कि हम उन नैतिक नियमों को जाने-समझें, जो हमारे धार्मिक आचरण के लिए अति आवश्यक हैं।

प.पू. मुनिश्री के विशेष प्रयासों से जैन समाज में अभूतपूर्व जागृति आयी है जिसके फलस्वरूप समाज में धार्मिक संस्कारों व धार्मिक सिद्धांतों के संबंध में गलत धारणाएँ विघटित हुई हैं और समाज के सुधीजन धर्म मार्ग पर चलने एवं धार्मिक शास्त्रों के मर्म को अनेकान्त दृष्टि से समझाने के लिए उत्साहित हुए हैं और मुनिश्री के आशीर्वाद एवं प्रेरणा से अनेकानेक गांवों, मंदिरों में धार्मिक पाठशालाएं खोली गई हैं, यह अपने आप में एक सराहनीय कार्य है।

अत: अन्त में हम यही मंगल भावना भाते हैं कि ऐसे ही धर्म प्रभावना के कार्य साधु सत्संग के सान्निध्य में सम्पन्न होते रहें एवं धर्म की ध्वजा निरंतर फहराती रहे। मुनि संघ के चरणारविन्द में मेरा मन, वचन, काय से वंदन वंदन वंदन ।

डॉ. सुधीर जैन
प्राध्यापक (भौतिकी)
शा. म.ल.बा. कन्या महाविद्यालय,
भोपाल (म.प्र.)

एफ-108/34, शिवाजी नगर,
भोपाल (म.प्र.)
फोन : 9425011357

प्रथम सोपान

दिनचर्या

मन को प्रशस्त और जीवन को नेक बनाने हेतु मानव को अपनी दैनिक चर्या में हमेशा व्यस्त रहना चाहिए। अच्छे कार्य करना ही हमारा कर्त्तव्य है क्योंकि लोक में कहावत चरितार्थ है कि "खाली मन शैतान का घर" और "खाली घर भूतों का डेरा"। अगर अपने मन को पुरुषार्थ पूर्वक धार्मिक कार्य या चिन्तन में न लगाकर खाली छोड़ रखेंगे तो मन शैतान बन बुरे (अशुभ) चिन्तनों में लगकर पाप का बंध कराएगा और गृह को खाली छोड़ने वाले का गृह एक दिन भूतों का आवास बनेगा। अतः हमें चाहिए कि हम पुण्य कर्म से उपलब्ध हुए मन, शरीर आदिक सम्पदाओं को कर्म निर्जरा एवं पुण्यानुबंधी पुण्य हेतु धार्मिक कार्यों या षडावश्यकों में लगाकर उसका वास्तविक उपयोग करें।

जो व्यक्ति निष्काम होता है वह निकम्मा कहलाता है। मन और तन दोनों सक्रिय होते हुए भी जो मानव उसे विषयों की निद्रा में गमाता है वह पृथ्वी पर भार होते हुए पशु सदृश कहलता है जैसे कि कहा भी गया है –

येषां न विद्या न तपो न दानं, ज्ञानं न शीलं न गुणो न धर्मः।
ते मर्त्यलोके भुवि भार भूता, मनुष्य रूपेण मृगाश्चरन्ति ॥

– नीति शतक

जिनके पास विवेक (बुद्धि) नहीं, बारह प्रकार के तप नहीं, चार दान नहीं, सम्यग्ज्ञान नहीं, सप्त शील नहीं, समीचीन गुण नहीं और रत्नत्रय या दश धर्म नहीं वे मनुष्य इस लोक में भूमि को भार होते हुए मनुष्य के रूप में तिर्यञ्चों के समान विचरण करते हैं। ऐसा निर्ग्रन्थ पूर्वाचार्यों का कथन सदुपदेश है।

आचार्य गुणभद्र ने अपनी आत्मानुशासन कृति में मन की चंचलता को बतलाते हुए कहा है कि मन एक बंदर के समान है उसे श्रुत वृक्ष पर रमाना चाहिए। इसका अर्थ यह हुआ कि अगर हम बंदर के समान मन को धार्मिक कार्यों में या षडावश्यकों में नहीं रमायेंगे तो धर्म या पुण्य सम्पदा रूप खेती सम्पूर्ण नष्ट हो जायेगी। अतः मन को बेकाम नहीं छोड़ना चाहिए।

इस संदर्भ में एक उदाहरण याद आ गया कि एक व्यक्ति ने झटपट काम करने हेतु एक भूत को वश में कर लिया, भूत वश में होते ही बोलता है कि मुझे काम बताओ! उस व्यक्ति ने काम बताया तो भूत ने झटपट कर दिखाया और फिर पूछा काम बताओ! तो पुनः काम बताते ही उस भूत ने तुरंत काम निपटा दिया अन्य कोई कार्य बाकी नहीं बचा। अब भूत कहता है कि काम नहीं बताया तो तुम्हारा गला दबाऊँगा। तब वह व्यक्ति घबड़ा गया और भय के मारे भागकर एक ज्ञानी के पास पहुंचा और कहता है कि भूत मेरा गला दबादेगा, क्या करूँ ? वह काम पूछता है लेकिन काम कुछ बाकी नहीं, क्या बताऊँ? तब ज्ञानी ने कहा कुछ तो भी काम जल्दी से बता दो उसे खाली मत छोड़ो नहीं तो तुम्हारी जीवन लीला समाप्त कर देगा। तो क्या बताऊँ? अरे इतना भी नहीं समझते! सीढ़ियों पर चढ़ना-उतरना ही बता दो यह काम जल्दी समाप्त नहीं होगा और तुम्हारा जीवन बच जाएगा।

इसी तरह अपने मन रूपी भूत को जो हमें बार-बार दुःख देता है पाप कर्म का बंध कराके दुर्गति में ले जाता है, एक के बाद एक आशा (इच्छा) उत्पन्न कराता है एवं पुण्य की सम्पदा नष्ट करता है उसे मोक्षमार्ग की सीढ़ियों पर चढ़ना बता देंगे, षडावश्यक में लगा देंगे तो हम निष्काम बनकर निर्बाध होते हुए, पाप धोते हुए, ध्यान में लीन होते हुए, मुक्तिधाम पहुँच जाएंगे। अतः मन भूत को वश में करने से मोक्ष मिलता है।

आज हमारी उपवास, उत्सव आदिक प्रभावना मात्र इस जीवन में सम्पूर्ण प्रभावना नहीं यह तो व्यावहारिक प्रभावना समझना चाहिए। बस यही मात्र हमारा

लक्ष्य नहीं, इसके ऊपर भी श्रृद्धा रखते हुए मुनि बनकर मन को वश में करके निश्चय प्रभावना को भी करना आवश्यक है। निर्ग्रन्थ बनकर मन को वश में किये बिना न सच्चा ध्यान होता है और न ही वास्तविक (निश्चय) रत्नत्रय की प्राप्ति की जा सकती है, फिर मोक्ष कहाँ ? अत: कुन्दकुन्दाचार्य ने अपने समयसार में निर्जरा अधिकार में कहा है कि –

विज्जारहमारूढ़ो मणोरहरएसु हणदि जो चेदा।
सो जिणणाणपहावी सम्मादिट्ठी मुणेयव्वो ॥

॥ स.सा.॥

भावार्थ – जो जीव विद्यारूपी रथ पर आरूढ़ होकर मन रूपी रथ के वेग को रोकता है वह जिनेन्द्र देव के ज्ञान की प्रभावना करने वाला सम्यग्दृष्टि जानना चाहिए।

अत: चपल मन के वेग को वश में करने हेतु जैसे मुनि लोग अपने समता, स्तुति, वंदना, प्रत्याख्यान, प्रतिक्रमण और कायोत्सर्ग इन षडावश्यकों को नियमित रूप से करते हैं वैसे ही श्रावक लोगों को भी आत्मशुद्धि के साधन रूप श्रावकों के षडावश्यकों को नियमित रूप से करना चाहिए। पद्मनन्दी पञ्चविंशतिका शास्त्र में पद्मनन्दी आचार्य ने श्रावकों के लिए प्रतिदिन करने योग्य षडावश्यकों का उत्तम कथन किया है-

देव पूजा गुरूपास्ति, स्वाध्याय: संयमस्तप:।
दानं चेति गृहस्थानां षट्कर्माणि दिने दिने ॥

वीतराग देव पूजा, गुरु भक्ति-सेवा, शास्त्र स्वाध्याय, संयम (व्रतनियम), उपवास, तप, आहार आदिक दान ये श्रावकों को दिन प्रतिदिन करना चाहिए।

इसी तरह श्रावकों, अणुव्रतियों को अपने बारह व्रतों में लगे अतिचारों हेतु प्रतिक्रमण प्रायश्चित्त आदि के द्वारा उत्तम दिनचर्या से आत्म शुद्धि को करते हुए, विशुद्धि के माध्यम से कर्मों का क्षयोपशम करते हुए मुनियों के व्रतों को प्राप्त कर मन को वश में करते हुए एक दिन उत्तम ध्यान द्वारा कर्मों का क्षयकर अन्तरात्मा से परमात्मा बनना चाहिए और अपने जीवन को नेक बनाना चाहिए। यही मेरी भावना एवं आशीर्वाद है।

19/9/2004 **मुनि आर्जवसागर**
भोपाल चातुर्मास

देव दर्शन विधि एवं उसका महत्व

प्रश्न (1) : देव दर्शन किसे कहते हैं ?

उत्तर : हम जो नमस्कार की मुद्रा में स्थित होकर वीतराग भगवान के गुणों का चिंतन करते हुए उन्हें देखते हैं या उनका स्मरण करते हैं उसे देव दर्शन कहते हैं।

प्रश्न (2) : जैन श्रावकों को मंदिर जी (जिनालय, चैत्यालय) में कैसे जाना चाहिए ?

उत्तर : जैन श्रावकों को स्नान करके, शुद्ध वस्त्रों के साथ शुद्ध पूजन द्रव्य लेकर मंदिर जी में जाना चाहिए।

प्रश्न (3) : मंदिर जी में जाने के लिए पहले स्नान करना आवश्यक क्यों है ?

उत्तर : क्योंकि गृहस्थों द्वारा घरों में आरंभादि पंच पाप होते रहते हैं इसलिए उनका शरीर अशुद्ध हो जाता है और उस शारीरिक अशुद्धि को स्नान से दूरकर मंदिर जी के पवित्र स्थान में जाना चाहिए।

प्रश्न (4) : चमड़े के सामानों के साथ (उन्हें लेकर या पहनकर) मंदिर में क्यों नहीं जाना चाहिए ?

उत्तर : जैसे आप लोग किसी मृत प्राणी या उसके अवयवों के स्पर्श मात्र से अपने को अशुद्ध मानते हैं (और स्नान करते हैं) वैसे ही स्वयं मृत या मारे गये प्राणी के शरीर से निकाले गये चमड़े के स्पर्श से अपने को अशुद्ध समझना चाहिए। मंदिर जी – जैसे पवित्र स्थान में जाने के लिए बड़ी शुद्धता की आवश्यकता है तथा जीवों के शरीर से उत्पन्न चमड़ा इत्यादिक में हमेशा सूक्ष्म जीवों की उत्पत्ति होती रहती है और उनका उपयोग करने से बहुत जीवों की हिंसा का महापाप होता है।

प्रश्न (5) : मंदिर जी में प्रवेश करने से पहले लोगों को छने जल से पैर धोने की आवश्यकता क्यों है ?

उत्तर : क्योंकि रास्ते से आते समय लोगों के पैरों में अशुद्ध पदार्थ लग जाते हैं और बिना पैर धोये मंदिर जी में प्रवेश करने पर मंदिर जी का वातावरण दूषित होता है।

प्रश्न (6) : मंदिर जी (जिनालय) में द्वार से प्रवेश करते समय क्या बोलना चाहिए?
उत्तर : मंदिर जी में प्रवेश करते समय निस्सही, निस्सही, निस्सही ऐसा तीन बार बोलना चाहिए।

प्रश्न (7) : मंदिरजी में प्रवेश करते समय निस्सही-3 बार बोलने की क्या आवश्यकता है?
उत्तर : जैसे लोग किसी विशेष जगह, किसी दूसरे के घर या अपने घर में जाने के पूर्व कुछ संकेत (आवाज) करते हुए या पूछकर ही प्रवेश करते हैं एवं वहाँ से पूछकर या संकेत करते हुए वापिस आते हैं क्योंकि वहाँ पर दृश्य या अदृश्य रूप से स्थित किसी मनुष्य, देव या तिर्यंचादिक को हमारे द्वारा कोई बाधा उपस्थित न हो। उसी तरह हम मंदिरजी आदि में प्रवेश करते समय निस्सही-3 द्वारा जीवों को संकेत करते हैं कि "मैं यहाँ प्रवेश कर रहा हूँ मुझे भी जगह दीजिए"।

प्रश्न (8) : प्रदक्षिणा किसकी दी जाती हैं एवं कितनी दी जाती हैं ?
उत्तर : प्रदक्षिणा वीतराग देव एवं निर्ग्रंथ गुरु की तीन-तीन दी जाती हैं।

प्रश्न (9) : वीतराग देव एवं निर्ग्रंथ गुरु की तीन-तीन प्रदक्षिणा क्यों दी जाती हैं ?
उत्तर : वीतराग देव (भगवान) एवं निर्ग्रंथ गुरु के पास जो रत्नत्रय विद्यमान हैं उसकी मुझे भी प्राप्ति हो इस भावना से तीन-तीन प्रदक्षिणा दी जाती हैं।

प्रश्न (10) : मंदिरजी में दर्शन करते समय भगवान के किस ओर (तरफ) खड़े होना चाहिए?
उत्तर : जिनालय में दर्शन करते समय भगवान के सामने, भगवान के दाये हाथ की तरफ खड़े होना चाहिए। (अगर ऐसी जगह सुलभ न हो तो राग-द्वेष किये बिना, किसी अन्य जगह भी खड़े हो सकते हैं)।

प्रश्न (11) : जिनेन्द्र प्रभु के दर्शन के उपरान्त क्या करना चाहिए ?
उत्तर : जिनेन्द्र प्रभु के दर्शनोपरान्त जिनाभिषेक का गंधोदक निम्नलिखित श्लोक बोलते हुये लेना चाहिए तदुपरांत पूजन करना चाहिए-

निर्मलं निर्मलीकरणं, पवित्र पापनाशनं।
जिन गंधोदक वंदे, अष्ट कर्म विनाशनं॥

प्रश्न (12) : गंधोदक कौन-सी अंगुलियों से लेकर कहाँ लगाना चाहिए ?

उत्तर : गंधोदक मध्यमा और अनामिका अंगुलियों से लेकर उत्तमाङ्ग (सिर और माथे) पर लगाना चाहिए।

प्रश्न (13) : जिनेन्द्र देव के दर्शन करते समय लोगों को सबसे प्रथम क्या बोलना चाहिए?
उत्तर : जिनेन्द्र देव के दर्शन करते समय लोगों को सबसे प्रथम णमोकार मंत्र बोलना चाहिए फिर चत्तारि मंगल पाठ एवं दर्शन स्तोत्र पढ़ना चाहिए।

प्रश्न (14) : जिनेन्द्र भगवान का दर्शन किस भावना से करना चाहिए?
उत्तर : जिनेन्द्र भगवान का दर्शन मुख्य तीन भावनाओं से करना चाहिए-

1. हे भगवान ! मैं भी आप जैसा गुणवान भगवान बनूँ।
2. हे भगवान ! मेरे पाप कर्म शीघ्र ही क्षय हों।
3. हे भगवान ! मुझे मोक्ष सुख की प्राप्ति हो।

या मेरे दु:खों का क्षय हो, मेरे कर्मों का क्षय हो, मुझे रत्नत्रय की प्राप्ति हो, मेरा सुगति गमन हो, मेरा समाधि से मरण हो और मुझे जिनेन्द्र भगवान की गुणरूपी सम्पदा मिले बस।

प्रश्न (15) : भगवान के दर्शन करते समय कैसे या किन भावों का त्याग करना चाहिए?
उत्तर : भगवान के दर्शन करते समय-

1. धन-वैभव की प्राप्ति के भावों का त्याग करना चाहिए।
2. सन्तानादिक की प्राप्ति के भावों का त्याग करना चाहिए।
3. राग-द्वेषात्मक भावों का त्याग करना चाहिए।

प्रश्न (16) : अगर हम लोग भगवान के सामने धन-वैभव, पुत्रादिक की प्राप्ति की भावना या कामना नहीं करेंगे तो हमें इन सांसारिक वस्तुओं की प्राप्ति कैसे होगी?
उत्तर : मोक्ष सुख के निमित्त दान, पूजा व्रतादिक धर्म करने से हमें जिस पुण्य कर्म का अर्जन होता है अथवा जो हमारा पूर्व संचित पुण्य होता है उसी पुण्य कर्म से हमें स्वयमेव सांसारिक वस्तुओं की प्राप्ति होती रहती है।

प्रश्न (17) : श्रावकों को भगवान के दर्शन एवं नमस्कार के बाद और किस-किस को नमस्कार करना चाहिए ?
उत्तर : श्रावकों को वीतराग भगवान के नमस्कार के बाद जिनवाणी (शास्त्र) एवं निर्ग्रंथ दिगम्बर गुरु को नमस्कार करना चाहिए तथा इसके बाद ऐलक, क्षुल्लक, आर्यिका, क्षुल्लिका को भी यथायोग्य नमस्कार करना चाहिए।

प्रश्न (18) : मंदिर के बाहर सरागी सम्यग्दृष्टि जीवों से या गृहस्थों से परस्पर में जय जिनेन्द्र का व्यवहार कर सकते हैं क्या?

उत्तर : हाँ, ऐसा करने में आगम से कोई बाधा नहीं।

प्रश्न (19) : जिन मंदिर में हमें और विशेष क्या-क्या करना चाहिए?

उत्तर : जिन मंदिर में और विशेष वीतरागी देव-शास्त्र-गुरु की पूजा, जप एवं स्वाध्याय करना चाहिए।

प्रश्न (20) : जप किन-किन मंत्रों का करना चाहिए?

उत्तर : जप; णमोकार मंत्र, अरिहंत-सिद्ध, ओम् नमः सिद्धेभ्यः, अ सि आ उ स नमः इत्यादिक वीतराग मंत्रों का करना चाहिए।

प्रश्न (21) : ऐसे वीतराग मंत्रों को जप करने से हमें क्या फल प्राप्त होता है?

उत्तर : ऐसे वीतराग मंत्रों का जप करने से असंख्यात कर्मों की निर्जरा एवं सातिशय पुण्य की प्राप्ति होती है।

प्रश्न (22) : स्वाध्याय क्यों करना चाहिए ?

उत्तर : स्वाध्याय पुण्य-पाप एवं मोक्ष मार्ग को जानने के लिए, राग-द्वेष के परिहार के लिए और अशुभकर्माश्रव से बचने के लिए करना चाहिए।

प्रश्न (23) : मंदिर जी से बाहर आते समय क्या बोलना चाहिए?

उत्तर : मंदिर जी से बाहर आते समय अस्सही-अस्सही-अस्सही बोलना चाहिए।

प्रश्न (24) : अस्सही का अर्थ क्या है ?

उत्तर : अस्सही का अर्थ है कि अब मैं बाहर जा रहा हूँ, आप अपनी जगह ग्रहण कर सकते हैं।

प्रश्न (25) : मानस्तम्भ किसे कहते हैं?

उत्तर : मान कषाय को गलाने वाले स्तम्भ विशेष को मानस्तम्भ कहते हैं। (मानस्तम्भ समवसरण में चारों दिशाओं में एक-एक की संख्या से चार होते हैं)।

प्रश्न (26) : यहाँ पंचम काल में भी मानस्तम्भ क्यों बनाते हैं?

उत्तर : भगवान के समवसरण की स्मृति विशेष के लिए पंचम काल में भी मानस्तम्भ बनाते हैं।

प्रश्न (27) : मानस्तम्भ में किसकी कितनी प्रतिमाएँ होती हैं ?

उत्तर : मानस्तम्भ में अरिहंत परमेष्ठी की चार प्रतिमाएँ होती हैं।

प्रश्न (28) : भगवान महावीर के समवसरण के समय मानस्तम्भ देखने से जिसका मान खण्डित हुआ था ऐसे विशेष व्यक्ति का नाम बतलाइए?

उत्तर : ऐसे विशेष व्यक्ति का नाम था ''इंद्रभूति'' गौतम (जो बाद में मुनि बनकर गणधर परमेष्ठी बने)।

प्रश्न (29) : मंदिर के ऊपर शिखर क्यों बनाते हैं ? उसका महत्व बतलाइए?

उत्तर : मंदिर के ऊपर शिखर बनाने में मुख्य चार कारण हैं -

1. शिखर बनाने से जिन मंदिर की पूर्ण शोभा होती है।
2. मनुष्य, देव, विद्याधर इत्यादिक को शिखर दिखने से मंदिर के निश्चित स्थान का ज्ञान होता है।
3. शिखर में ओंकारादि मंगल ध्वनि गुंजायमान होती है।
4. मंदिर का उत्तुंग शिखर देखने से मानव का मान खण्डित होता है।

प्रश्न (30) : सुना जाता है कि ध्वजा के बिना जिनालय के शिखर की शोभा नहीं होती अतः श्रावक लोग जो मंदिर के शिखर पर त्रिकोण या चतुष्कोण वाली केशरिया स्वास्तिक सहित ध्वजा लगाते हैं उसमें विशेष क्या लाभ है?

उत्तर : इस प्रकार की ध्वजा जिनालय के शिखर के ऊपर लगाने से हमें निम्नलिखित लाभ हैं -

1. इस प्रकार की ध्वजा से जिनालय की दूर से ही पहिचान होती है।
2. स्वस्तिक सहित केशरिया ध्वजा शुभ का प्रतीक है।
3. स्वस्तिक सहित केशरिया ध्वजा को अष्ट मंगलों के अंतर्गत ग्रहण किया जाता है।
4. इसी तरह पञ्च वर्ण की ध्वजा को भी जैन धर्म का प्रतीक माना है अतः उसे भी लगाना श्रेष्ठ है। स्वस्तिक सहित केशरिया रंग की शुभ एवं मंगल रूप फहराती हुई ध्वजा जैन धर्म की प्रभावना का प्रतीक है।

प्रश्न (31) : सच्चे देव, शास्त्र, गुरु को परमार्थ वैद्य क्यों कहा गया है ?

उत्तर : क्योंकि जैसे शरीर के रोगों का उपचार करने वाले व्यक्ति लौकिक वैद्य कहे

जाते हैं, वैसे ही सच्चे देव-शास्त्र-गुरु हमारी आत्मा के जन्म, जरा, मृत्यु रूपी रोगों का उपचार करते हैं इसलिए उन्हें परमार्थ वैद्य कहा गया है।

प्रश्न (32) : महिलाएँ (स्त्रियां) भगवान एवं गुरु को स्पर्श क्यों नहीं कर सकती ?

उत्तर : क्योंकि गुरु अर्थात् महाव्रती मुनि अठारह हजार प्रकार की शीलों के धारक होते हैं तथा जिन शीलों में अचेतन (काष्ठादि से निर्मित) स्त्री का स्पर्श भी निषिद्ध है और भगवान तो मुनि से भी बड़े महान हैं अत: ऐसा जान करके महिला वर्गों को पाप एवं दोषों के भय से, महाव्रती, अठारह हजार शीलों के धारक भगवान एवं गुरु का स्पर्श नहीं करना चाहिए एवं गुरु आदिक के व्रतों में बाधक नहीं बनना चाहिए।

प्रश्न (33) : जिन मंदिर में आकर जिनेन्द्र देव के दर्शन करने से पांच लाभ (महत्व) बताइए?

उत्तर : जिन मंदिरजी में आकर जिनेन्द्र देव का दर्शन करने से-

1. अनंत उपवासों के बराबर फल प्राप्त होता है।
2. असंख्यात कर्मों की निर्जरा होती है।
3. बहुत पुण्य कर्म की प्राप्ति होती है।
4. मन के विकारी भाव नष्ट हो जाते हैं।
5. दर्शनार्थी का जीवन मंगलमय सुखकारी होता है।

प्रश्न (34) : दर्शन स्तोत्र, कषाय पाहुड़, षट्खण्डागम और पद्मनंदी पञ्चविंशतिका आदि ग्रन्थों में जिनेन्द्र देव के दर्शन की महिमा के संबंध में और क्या विशेष कथन किया गया है?

उत्तर : पूर्वाचार्यों ने दर्शन स्तुति में कहा है कि -

दर्शनं देव देवस्य, दर्शनं पाप नाशनं।
दर्शनं स्वर्ग सोपानं, दर्शनं मोक्ष साधनं॥

अर्थ - देवाधिदेव (वीतराग जिनेन्द्र भगवान) का दर्शन पाप कर्मों का नाश करने वाला है और वह दर्शन स्वर्ग की प्राप्ति के लिए सीढ़ियों के समान है एवं मोक्ष प्राप्ति का श्रेष्ठ साधक (उपाय) है।

कषाय पाहुड़ की पहली पुस्तक में कहा है कि -

अरहंतणमोक्कारो संपहियबंधादो असंख्येज्जगुण - कम्मक्खयकारओत्ति।

अर्थ - अरहंत दर्शन (नमस्कार) तत्कालीन बंध की अपेक्षा असंख्यात गुणी कर्म निर्जरा का कारण है।

धवला ग्रन्थ की छठवीं पुस्तक में भी कहा गया है कि -

जिणबिम्बदंसणेण णिधत्तणिकाचिदस्स विमिच्छत्तादिकम्मकलावस्य खयदंसणादो ।

अर्थ - जिन बिम्ब के दर्शन से निधत्त और निकाचित रूप भी मिथ्यात्वादि कर्म कलाप का क्षय देखा जाता है।

पद्मनन्दी पञ्चविंशतिका शास्त्र में भी कहा है कि -

ये जिनेन्द्रं न पश्यन्ति, पूजयन्ति स्तुवन्ति नः।
निष्फलं जीवितं तेषां, तेषां धिक् च गृहाश्रमम् ॥15॥
प्रातरुत्थाय कर्त्तव्यं, देवता गुरु दर्शनम्।
भक्तया तद्वन्दना कार्या, धर्मश्रुतिरुपासकैः ॥16॥

अर्थ - जो जीव भक्ति से जिनेन्द्र भगवान का न दर्शन करते हैं, न पूजन करते हैं और न ही स्तुति करते हैं उनका गृहस्थाश्रम में रहना धिक्कार है। श्रावकों को प्रात:काल में उठ करके भक्ति से जिनेन्द्र देव तथा निर्ग्रन्थ गुरु का दर्शन और उनकी वंदना करके धर्म श्रवण करना चाहिए (तत्पश्चात् अन्य कार्यों को करना चाहिए)।

प्रश्न (35) : एक पत्थर की मूर्ति में पूज्यता कैसे आती है ?

उत्तर : पंच कल्याणक प्रतिष्ठा (स्थापना) एवं मंत्र संस्कारादि से एक पत्थर की मूर्ति (प्रतिमा) में पूज्यता आ जाती है। पंचकल्याणक से प्रतिष्ठित मूर्ति में प्राय: कई अतिशय (चमत्कार) भी देखे जाते हैं।

प्रश्न (36) : मानव को णमोकार मंत्र पढ़ने का, जैन धर्म के नियम पालन करने का और जिन मंदिर जाने आदि का सद्धर्म का संस्कार कब दिया जाता है?

उत्तर : मानव को यह सद्धर्म का संस्कार बचपन (बालक, बालिका-रूप प्राथमिक अवस्था) में दिया जाता है।

प्रश्न (37) : मानव को यह सद्धर्म का संस्कार बचपन में ही देना क्यों आवश्यक है? विशेष उदाहरण द्वारा समझाइए।

उत्तर : बचपन अवस्था में बच्चों का हृदय या परिणाम बहुत कोमल एवं सरल होता है तथा ऐसे कोमल एवं सरल हृदय पर माता-पिता द्वारा जो सद्धर्म का संस्कार दिया जाता है वह संस्कार बच्चों पर जीवन के अंत समय तक स्थित बना रहता है। जब बच्चे धर्म संस्कार के दिये बिना ही बड़े हो जाते हैं तब उनके हृदय को परिवर्तित करना प्राय: बहुत कठिन होता है। जैसे- अंगूर की अंकुरित हुई छोटी लता को रस्सी या लकड़ी का सहारा देकर सहजता के साथ योग्य दिशा में ले जाया जा सकता है। लेकिन किसी सहारे के अभाव में उसी लता को विपरीत दिशा में जाने के उपरांत, बढ़ने और कठोर होने के उपरांत उसकी दिशा को परिवर्तित करना बहुत कठिन या असंभव होता है। इसी तरह मिट्टी जब तक कोमल (गीली) अवस्था में होती है तब तक उसे घट, दीपक आदि का आकार दिया जा सकता है और जब वही मिट्टी सूखकर कठोर हो जाती है तब उस सूखी मिट्टी को कोई घटादि का आकार देना सम्भव नहीं है। इन उदाहरणों से शिक्षा लेते हुए बच्चों को प्राथमिक (बचपन) अवस्था में ही धर्म का संस्कार देना परम आवश्यक है।

प्रश्न (38) : एक छोटे अल्पज्ञ बालक पर णमोकार मंत्रादिक के संस्कार का प्रभाव कैसे पड़ सकता है?

उत्तर : ऐसा नहीं; जब एक पत्थर की अचेतन मूर्ति पर णमोकार मंत्र सूरि मंत्र आदि के संस्कार का प्रभाव पड़ सकता है एवं उस संस्कारित मूर्ति में अतिशय भी हो सकते हैं। जिस णमोकार मंत्र को सुनकर कुत्ता, जटायु, सर्प और बैल आदि कई तिर्यञ्च भी देवादिक रूप सद्गति को प्राप्त हुए हैं, तब एक सचेतन मनुष्य बालक पर णमोकार मंत्रादिक के संस्कार का प्रभाव क्यों नहीं पड़ सकता? अर्थात् अवश्य पड़ सकता है।

प्रश्न (39) : मंदिरजी में धर्म संस्कार के लिए स्थापित धार्मिक पाठशाला में पढ़ने से भव्यात्माओं को कौन-कौन से अपूर्व लाभ हैं ?

उत्तर : मंदिरजी में धर्म संस्कार के लिए स्थापित धार्मिक पाठशाला में पढ़ने से भव्यात्माओं को ग्यारह अपूर्व लाभ हैं -

1. जैन दर्शन का (जैन फिलॉसफी का) सच्चा ज्ञान होता है।
2. रूढ़िवाद से हम दूर होते हैं।
3. मंदिर जाने की विधि का या दर्शन विधि का हमें ज्ञान होता है।
4. सप्त व्यसन जीवन में नहीं आ पाते हैं।
5. हमारे आराध्य पंच परमेष्ठी के गुणों का एवं उनके जीवन दर्शन का (चरित्र का) हमें ज्ञान होता है।
6. मंदिर में की जाने वाली समीचीन पूजनादि क्रियाओं का महत्व मालूम पड़ता है।
7. पाठशाला से हमें धर्मायतनों की रक्षा की प्रेरणा मिलती है।
8. मुनि या साधु संघ की भक्ति एवं सेवा की हमें शिक्षा मिलती है।
9. पाठशाला में पूर्वाचार्यों द्वारा रचित जिनवाणी का सदुपयोग होता है एवं अनेकान्त मय जिनवाणी के स्वाध्याय से हमें अनुयोगों या तीनों लोकों का ज्ञान होता है।
10. पाठशाला में रहकर धार्मिक कार्य करने से हम पाप कर्म से दूर रहते हैं एवं बहुत पुण्य का संपादन तथा असंख्यात कर्मों की निर्जरा करते हैं।
11. पाठशाला से प्राप्त हुआ धर्म संस्कार जीवन पर्यंत स्थायी रहते हुए आत्मोन्नति या आत्मोद्धार का तथा सद्गति का कारण होता है।

प्रश्न (40) : उस उपकारी माँ का नाम क्या था जिसने संकल्प किया था कि मेरे जितने बेटे होंगे मैं उन सभी बेटों को मुनि बनने का संस्कार दूँगी जिसके पुण्य से मैं भी अगले भव में मुनि बन मोक्ष प्राप्त कर सकूं?

उत्तर : उस उपकारी माँ का नाम था ''मदालसा माँ''।

द्वितीय सोपान

नैतिकता और शिष्टाचार

जिन मंदिर संबंधी नैतिकता और शिष्टाचार -

1. जिनालय के बाहर हाथ, पैर, मुखादिक अंगों को साफ कर शुद्धता के साथ जिनालय में निस्सही, निस्सही, निस्सही करते हुए प्रवेश करना चाहिए एवं जिनालय से अस्सही, अस्सही, अस्सही करते हुए बाहर आना चाहिए।
2. जिनालय में चमड़े, नेलपालिश और लिपिस्टक आदि अशुद्ध वस्तुओं के साथ नहीं जाना चाहिए।
3. जिनालय के अंदर भगवान के ठीक सामने न खड़े होकर बाजू में खड़े होना चाहिए, जिससे किसी भी व्यक्ति को दर्शन में बाधा ना पहुँचे।
4. जिनालय में पूजा के रूप में मर्यादा से बाहर अशुद्ध द्रव्य नहीं चढ़ाना चाहिए एवं नारियल नहीं कट करना चाहिए, न फोड़ना चाहिए, क्योंकि अशुद्ध द्रव्य चढ़ाने से हिंसा का एवं नारियल फोड़ने से बलि प्रथा के समर्थन का दोष आता है। (कई अजैन लोग नारियल के तीन चिन्हों में से दो को आखें एवं एक मुँह मानकर उसे एक जीव की बली रूप से काटकर हिंसा करते हैं।)
5. जिनालय के अन्दर दीवाल से टिककर नहीं बैठना चाहिए क्योंकि वह आलस्य

का प्रतीक है एवं ऐसे बैठने से प्रमाद (निद्रा) भी आ सकता है।

6. जिनालय में घरेलू खान-पान या व्यापारादिक की चर्चा नहीं करना चाहिए क्योंकि विकथा से पाप बंध होता है।
7. जिनालय में अप्रासंगिक ज्यादा हँसना नहीं चाहिए क्योंकि यह असभ्यता का प्रतीक है।
8. पूजा, स्तोत्र पाठ एवं जप करते समय एकाग्रता रखना चाहिए, इधर-उधर देखना नहीं चाहिए।
9. जिनालय में भगवान के सामने शयन नहीं करना चाहिए, क्योंकि ऐसा करने से भगवान की अविनय होती है।
10. वीतराग भगवान के जिनालय में स्वयं का, दूसरों का शृंगार नहीं करना चाहिए क्योंकि इसे शास्त्रों में असादना दोष कहा है।
11. जिनालय में भी किसी से झगड़ा एवं अपशब्द का प्रयोग नहीं करना चाहिए क्योंकि ऐसा करने से महापाप का बंध होता है।
12. जिनालय संबंधी कोई वस्तु घरेलू काम में नहीं लाना चाहिए और अपने द्वारा चढ़ाया गयी पूजा की अष्ट द्रव्य, धन, पैसा या नारियलादि द्रव्य पुनः उपयोग में नहीं लेना चाहिए।
13. मंदिर संबंधी अपने द्वारा बोली गई बोली की धन राशि तुरन्त या ज्यादा से ज्यादा एक माह में व्यवस्थापकों को सौंप देनी चाहिए।
14. जिनालय में भगवान और दिगम्बर समीचीन मुनि को साष्टांग, षष्टांग या पञ्चांग नमस्कार एवं आर्यिका, ऐलक, क्षुल्लक एवं क्षुल्लिका को पञ्चांग नमस्कार करना चाहिए।
15. ऊपर कहे गए लिंगों से (भेषों से) रहित कुलिंगियों एवं शृंगार, रंगीन वस्त्रादिक से सहित संसारी देवी-देवताओं को साष्टांग, षष्टांग, पंचांग नमस्कार, आरती या शृंगारादि कार्य नहीं करना चाहिए क्योंकि मिथ्यात्व का दोष आता है।
16. असंयमी, सरागियों या गृहस्थों में आइए-आइए, जय जिनेन्द्र बोलने रूप लौकिक व्यवहार जिनालय के बाहर करना चाहिए। भगवान और वीतरागी गुरु के सामने नहीं। केवल प्रसन्नता या सिर हिलाना ही पर्याप्त समझना चाहिए।

17. कोई पिच्छिका के साथ अगर कार, टेलीफोन, लेपटॉप, धन, पैसा, खड़ाऊ, पगड़ी इत्यादि रखते हों एवं एक बार से अधिक बार भोजन, साबुन से स्नान, बालों की कटिंग-शेविंग, सेटिंग आदि करते हों तथा मंत्र-तंत्र, ज्योतिष, शादी-विवाह हेतु कुण्डली तैयार करना इत्यादिक कार्य करते हों तो ऐसे कोई आगम से विपरीत भेषधारी अगर जिनालय के पास या अन्य जगह मिल जाए तो उन्हें पत्थर की नाव के सदृश समझकर दूर से ही छोड़ देना चाहिए। वीतरागता के उपासक अगर उनसे नमस्कार, विनय इत्यादिक करते हैं तो साधु अवस्था के अयोग्य कार्यों के समर्थन के साथ उन्हें गुरु मूढ़ता रूप मिथ्यात्व का दोष आता है।

जिनेन्द्र भगवान के सामने पालन करने योग्य शिष्टाचार -

1. शारीरिक एवं वस्त्रों की शुद्धता के बिना एवं अशुद्ध वस्तुओं के साथ जिनेन्द्र भगवान के समीप गर्भ गृह में नहीं जाना चाहिए।
2. स्त्री वर्ग द्वारा भगवान का स्पर्श नहीं होना चाहिए।
3. नाक, कान आदिक संबंधी किसी तरह के मल आदिक का क्षेपण जिनेन्द्र भगवान के सामने एवं मंदिर में नहीं करना चाहिए।
4. भगवान के गंधोदक को लगाते समय उस गंधोदक की एक भी बूंद नीचे जमीन पर नहीं गिरना चाहिए एवं उत्तमाङ्ग (सिर, ललाट) के अलावा अन्य अंगों में गंधोदक को नहीं लगाना चाहिए।
5. भगवान के सामने या जिनालय में सांसारिक, वैद्ययिक, तंत्र-मंत्र, ज्योतिष आदि कार्यों का प्रयोग या शादी-विवाह की वार्ता नहीं करना चाहिए।
6. जिसमें धन, पैसे की चर्चा एवं हल्ला (जोर से आवाज) का प्रसंग उपस्थित होता है ऐसी मीटिंग बैठक या सभा भगवान के सामने नहीं करना चाहिए।
7. भगवान के सामने या जिनालय के तरफ पैर करके शयन नहीं करना चाहिए।
8. भगवान के सामने या जिनालय में पादत्राण (जूता, चप्पल), मोजा पहनकर नहीं जाना चाहिए।
9. पशुओं के बाल से निर्मित वस्त्रों एवं रेशमी वस्त्रों के साथ भगवान के निकट में

मूलगृह नहीं जाना चाहिए।

10. भगवान के सामने केशों को नहीं संवारना चाहिए एवं तेल, कुमकुम आदिक से शृंगार नहीं करना चाहिए।
11. घरेलू अनाज या कोई भी खाद्य पदार्थ भगवान के सामने या जिनालय में या वेदी के नीचे सूखने नहीं डालना चाहिए और न संग्रहकर रखना चाहिए।
12. मांस, शराब आदिक अशुद्ध (अभक्ष) वस्तुओं के सेवन करने वालों को जिनेन्द्र देव के समीप या मंदिर में प्रवेश नहीं करना चाहिए। ऐसे लोगों को बाहर से दर्शन करा सकते हैं।
13. भगवान के सामने या मंदिर में प्रसाद को नहीं बांटना चाहिए एवं प्रसाद को नहीं खाना चाहिए। दरवाजे के बाहर प्रभावना के रूप में आहार का स्वल्पाहार दिया जा सकता है।
14. भगवान के सामने या जिनालय में होली (फाग) नहीं खेलना चाहिए। फटाखे नहीं फोड़ना चाहिए। ऐसे कार्यों के पूर्ण रूप से त्याग करने पर ही हिंसा या रूढ़िवाद से दूर हो सकते हैं।
15. जिनालय में राज्यादिक के दण्ड के भय से छुपना नहीं चाहिए एवं अस्त्र-शस्त्र भी नहीं रखना चाहिए।
16. भगवान के समीप या जिनालय में पशुओं को बांधना (पालना) नहीं चाहिए।
17. भगवान के सामने सांसारिक उधार, लेन-देन या घूसखोरी नहीं करना चाहिए।
18 बिना हाथ धोए शास्त्र एवं गंधोदक को छूना नहीं चाहिए।
19. साक्षात् भगवान या वीतरागी देव, शास्त्र, गुरु से ऊपर न बैठना न खड़े होना चाहिए।
20. भगवान के सामने या जिनालय में मन में विकार उत्पन्न करने वाले चित्र नहीं लगाना चाहिए।
21. भगवान के समीप पीठ करके नहीं बैठना चाहिए।
22. भगवान की प्रतिमा को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाते समय अपनी नाभि से नीचे नहीं करना चाहिए।

23. भगवान की मूर्ति को लेकर आते समय बैठे नहीं रहना चाहिए अर्थात् विनय से खड़े होकर हाथ जोड़कर जय-जय जयकार की घोष करना चाहिए।

शास्त्र-विनय संबंधी शिष्टाचार -

1. शास्त्र सभा में शास्त्र जी लाए जाते समय बैठे नहीं रहना चाहिए अर्थात् खड़े होकर प्रणाम की मुद्रा में जय घोष (जिनवाणी माता की जय) करना चाहिए।
2. शास्त्र को बिना हाथ, पैर, मुख आदिक साफ किए अर्थात् अशुद्ध अवस्था में छूना नहीं चाहिए।
3. चमड़े के सामान एवं रेशमी आदि अशुद्ध सामग्री के साथ शास्त्र-स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।
4. शास्त्र-स्वाध्याय का प्रारम्भ एवं अन्त णमोकार मंत्र या मंगलाचरण के बिना नहीं करना चाहिए (अर्थात् स्वाध्याय के प्रारम्भ में णमोकार मंत्र मंगलाचरण श्रुत भक्ति , आचार्य भक्ति एवं अन्त में जिनवाणी स्तुति अवश्य पढ़ें)।
5. शास्त्र को अपनी नाभि से नीचे करके गमन नहीं करना चाहिए अर्थात् चलते समय शास्त्र को नाभि से नीचे नहीं रखना चाहिए।
6. शास्त्र को पैर पर रखकर नहीं पढ़ना चाहिए।
7. शास्त्र के पन्ने हाथ में थूक लगाकर नहीं पलटना चाहिए।
8. शास्त्र का स्वाध्याय दीवाल से टिककर बैठकर अर्थात् दीवाल से पीठ लगाकर, टिकाकर, नहीं करना चाहिए।
9. शास्त्र का स्वाध्याय बिस्तर पर लेटे-लेटे नहीं करना चाहिए क्योंकि बिस्तर भी अशुद्ध हो सकते हैं और अचानक निद्रा आने पर शास्त्र भी नीचे गिर सकता है।
10. शास्त्र की तरफ पैर करके शयन नहीं करना चाहिए।
11. शास्त्र के सामने या शास्त्र स्वाध्याय में और शास्त्र संबंधी प्रवचन सभा में पैर फैलाकर नहीं बैठना चाहिए।
12. शास्त्र-स्वाध्याय में विकथा (लौकिक या घरेलू चर्चा) नहीं करनी चाहिए।
13. शास्त्र-स्वाध्याय में हँसी-मजाक नहीं करना चाहिए।

14. शास्त्र जमीन पर नहीं रखना चाहिए अर्थात् शास्त्र रहल, चौरंग आदि उच्च स्थान पर सीधा रखना चाहिए।
15. पैरों की भयानक बीमारी के समय के अलावा कुर्सी, बैंच आदि से नीचे पैर लटकाकर शास्त्र का स्वाध्याय नहीं करना चाहिए अर्थात् पर्यंकासन या पद्मासनादि प्रशस्त आसनों के साथ बैठकर स्वाध्याय करने से शास्त्र की विनय एवं हमारे ज्ञान में वृद्धि होती है।
16. शास्त्र की सुरक्षा हेतु शास्त्र पर बिना पुट्ठा (कवर) चढ़ाए अधिक दिन तक पढ़ने से शास्त्र खराब हो जाता है अगर शास्त्र पहले से ही अच्छे कवर में सुरक्षित नहीं है तो उसे कवर चढ़ाकर पढ़ना चाहिए क्योंकि ऐसा न करने से शास्त्र जल्दी फट जाता है।
17. शास्त्र के अंदर रुपया-पैसा और घरेलू सांसारिक पत्र आदिक नहीं रखना चाहिए।
18. मांस, शराब आदि अशुद्ध पदार्थों के सेवन करने वाले के हाथ में आचार्यों द्वारा रचित शास्त्र दान नहीं देना चाहिए अर्थात् ऐसा करना शास्त्र की अविनय है। हाँ, अगर वह अशुद्ध पदार्थ त्याग करने का संकल्प करे और शास्त्र का अच्छा उपयोग कर सके तो शास्त्र दान दिया जा सकता है।
19. शास्त्र के वाचन के समय एवं शास्त्र के प्रकाशन के समय शास्त्र में मिथ्यात्व संबंधी रूढ़िवादी एवं सरागी देवी-देवताओं के कथन को नहीं मिलना चाहिए।
20. शास्त्र के प्रकाशन के समय शास्त्र में किसी सप्त व्यसनी का नाम एवं हिंसक पदार्थों के व्यापार का नाम नहीं देना चाहिए।

दिगम्बर मुनि महाराज के सामने न करने योग्य कार्य एवं शिष्टाचार-

1. मुनि महाराज जब निकट आते हैं तब बैठे ही नहीं रहना चाहिए अर्थात् जब श्रावक सामायिक जपादि प्रमुख कार्य नहीं कर रहा है और उस समय वह गुरु को समीप आता देख उठकर खड़ा हो जाए एवं नमस्कार की मुद्रा में यथायोग्य विनय नमस्कार आदिक करे।
2. मुनि महाराज को बिना हाथ-पैर, मुखादिक अंग स्वच्छ किये और जूता, चप्पल, चमड़ा इत्यादिक अशुद्ध पदार्थों के साथ स्पर्श नहीं करना चाहिए।

3. महिला (स्त्री) वर्ग को मुनि महाराज का स्पर्श नहीं करना चाहिए।
4. मुनि महाराज जब ध्यान, प्रतिक्रमण आदि प्रमुख आवश्यकों में लीन हों तब चरण नहीं छूना चाहिए एवं उनसे कोई चर्चा करने की कोशिश नहीं करना चाहिए।
5. मुनि महाराज के दर्शन या उनसे नियम ग्रहण और शंका समाधान हेतु किसी महिला को अकेले नहीं जाना चाहिए अर्थात् कम-से-कम दो महिलाएँ या किसी पुरुष के साथ गुरु के पास जाएँ।
6. मुनि महाराज के दर्शन या उनके पास नियम ग्रहण और शंका समाधान आदि धार्मिक कार्य बिलकुल पास में स्थित होकर या खड़े-खड़े एवं बिना नमस्कार किये नहीं करना चाहिए।
7. मुनि महाराज के सामने बहुत जोर से अभिमान युक्त वचन या भद्दे वचन नहीं बोलना चाहिए।
8. मुनि महाराज की निंदा न करना चाहिए, न लिखना चाहिए और न ही सुनना चाहिए।
9. मुनि महाराज की समीचीन बात काटते हुए शास्त्र के विपरीत नहीं बोलना चाहिए।
10. मुनि महाराज की तरफ पीठ करके बैठना या खड़े नहीं रहना चाहिए।
11. मुनि महाराज की वसतिका (ठहरने के स्थान) की तरफ पैर करके शयन आदि नहीं करना चाहिए।
12. मुनि महाराज को लोगों की दृष्टि से नीचा दिखाने की कोशिश नहीं करना चाहिए एवं उन्हें बुरी नजर से नहीं देखना चाहिए।
13. मुनि महाराज के पास ग्रहण किये गए नियम या व्रत को कदापि भंग नहीं करना चाहिए अर्थात् अपनी निश्चित सीमा तक पालन करना चाहिए।
14. मुनि महाराज के लिए अशुद्ध या अन्याय से उपार्जित आहार या उपकरण समर्पित नहीं करना चाहिए।
15. मुनि महाराज के सामने घरेलू, व्यापार, सन्तान उत्पत्ति या राजनैतिक चर्चाएँ नहीं करना चाहिए।
16. आरम्भ परिग्रह के साधनभूत बनवाये गए नए मकान या नई फैक्टरी, दुकान का

उद्घाटन (प्रारम्भ) और नए खरीदे गए बर्तन का प्रयोग प्रारम्भ, परिग्रह त्यागी साधुओं द्वारा नहीं करना/कराना चाहिए।
17. मुनि महाराज (गुरु) और शिष्य आमने सामने बैठकर जब कोई धार्मिक आवश्यक आदि क्रिया में लीन हों तो उनके बीच से नहीं निकलना चाहिए।
18. दिगम्बर साधुओं की, घरेलू नौकरों, व्यसनियों एवं गुरु या धर्म सेवा के बदले धनादिक की आशा व लोभ रखने वाले व्यक्तियों से दानादिक रूप वैयावृत्ति या सेवा नहीं कराना चाहिए।
19. गुरु के आसन पर या गुरु से ऊँचे आसन पर नहीं बैठना चाहिए।

धर्म सभा सम्बन्धी नैतिकता और शिष्टाचार -

1. धर्म सभा में मंगलाचरण होने के पूर्व ही पहुँचना चाहिए और अति आवश्यक कार्य बिना बीच में ही सभा से बाहर नहीं जाना चाहिए, क्योंकि ऐसा करना शास्त्र एवं वक्ता की अविनय है।
2. धर्म सभा के प्रारम्भ में सच्चे साधु के उपस्थित या उनका आगमन होने पर अथवा साधु विरहित धर्म सभा में योग्य समीचीन वक्ता के आने पर उनकी खड़े होकर, हाथ जोड़कर यथायोग्य विनय करना चाहिए। धर्म सभा के बीच में साधु या प्रमुख वक्ता के उपस्थित होने पर खड़े होकर उनकी भी यथा योग्य विनय करना चाहिए।
3. धर्मसभा में उपस्थित होने के पूर्व ही श्रावकों को मोबाईल बंद कर देना चाहिए क्योंकि क्षणमात्र की बाधा ज्ञानावरण व दर्शनावरणादि कर्म के बंध में कारण बन जाती है।
4. धर्म सभा में जो धार्मिक विषय चल रहा है उसे ध्यान से सुनना चाहिए एवं उससे भिन्न अन्य विषय सम्बन्धी आपस में वार्ता नहीं करना चाहिए।
5. आगे स्मृति हेतु धर्म सभा (प्रवचन) सम्बन्धी आगम युक्त विषय को अपनी नोट बुक में नोट कर लेना चाहिए।
6. धर्म सभा में नीची (नम्र) दृष्टि से या वक्ता की ओर दृष्टि करके बैठना चाहिए।

7. धर्म सभा में अप्रासंगिक हँसना नहीं चाहिए और ना ही इधर-उधर देखना चाहिए क्योंकि ऐसा करने से वक्ता एवं श्रोताओं के लिए बाधा हो सकती है।

8. समीचीन वक्ता के द्वारा धर्म सभा में चल रहे धार्मिक विषय में कोई जिज्ञासा हो तो वक्ता की आज्ञापूर्वक खड़े होकर मृदु वचनों में तात्कालिक विषय को न छोड़ते हुए पूछना चाहिए।

9. धर्म सभा में निर्भयता, निर्लोभता या नि:स्वार्थता के साथ एवं तात्कालिक परिस्थिति में आवश्यकतानुसार भव्य जीवों के उद्धार की भावना लेकर धार्मिक विषय का आगमनानुसार अनेकान्तपूर्वक स्पष्ट विवेचन होना चाहिए।

10. धर्म सभा में उपयुक्त ऐसा स्पष्ट विवेचन करने की सामर्थ्य न हो तो (मौन होकर) धर्म सभा से दूर रहना चाहिए।

11. धर्म सभा में मिथ्यात्व का कथन करने वाला अर्थात् सरागी देवी-देवताओं की पूजा करने का एवं मिथ्या एकान्त का कथन करने वाला कोई व्यक्ति उपस्थित होकर मिथ्यात्व कथन करने लग जाए और हमारे अन्दर अगर उसके मिथ्या मत का खण्डन करने की सामर्थ्य न हो एवं सुनना अखरता हो तो मिथ्यात्व के समर्थन के भय से सभा से बाहर चले जाना चाहिए।

सामान्य शिष्टाचार

1. किसी संस्था या स्वामित्व वाले धार्मिक व सामान्य क्षेत्र पर जाने एवं ठहरने के लिए अथवा वहां की वस्तुओं को उपयोग करने के लिए वहां के योग्य व्यवस्थापकों से अनुमति लेना चाहिए। यदि अनजाने में उपयोग में आ जाये तो क्षमा याचना करना आवश्यक है। देव स्थान या नये स्थान पर निस्सहि, अस्सहि अवश्य करें।

2. किसी क्षेत्र या संस्था की किन्हीं वस्तुओं का उपयोग करने के बाद श्रावकों को उस क्षेत्र या संस्था के लिए निश्चित की गई या योग्य राशि का भुगतान करना चाहिए।

3. क्षेत्र या संस्थान में कचड़ा नहीं फैलाना चाहिए और अपने द्वारा किसी तरह का कचड़ा फैल गया हो तो उसे स्वच्छ करने का ध्यान रखना चाहिए।

4. बिना बुलाए या बिना अनुमति के किसी के घर में, कार्यालय में अथवा दुकान की निश्चित सीमा के आगे या अन्दर नहीं जाना चाहिए।

5. किसी व्यक्ति की कोई वस्तु जो डिब्बे अलमारी या कागज आदि के अन्दर बंद है उसे बिना अनुमति के खोलकर नहीं देखना चाहिए क्योंकि ऐसा करना चोरी के दोष का कारण है।

6. दीर्घ शंका (मलक्षेपण) को जाते समय अपने हाथ में छना, परिशुद्ध जल लेकर दूर किसी ओट में बैठना चाहिए एवं बाद में जल से शुचिता करके हाथों को कम-से-कम तीन बार मिट्टी इत्यादिक के चूर्ण से शुद्ध करना चाहिए। लघु शंका जाने के उपरांत भी जरूर शुद्ध जल से हाथ, पैरादिक अंगों को शुद्ध करना चाहिए तदुपरान्त ही शास्त्र इत्यादिक पवित्र वस्तुओं को स्पर्श करना योग्य है।

7. किसी व्यक्ति की रखी हुई, गिरी हुई, भूली हुई, छोटी या बड़ी, सस्ती या कीमती वस्तु को वस्तु के स्वामी की अनुमति के बिना नहीं उठाना चाहिए और न किसी को देनी चाहिए तथा उस वस्तु को एक स्थान से दूसरे स्थान पर नहीं रखना चाहिए क्योंकि ऐसा करने से चोरी का दोषारोपण या चोरी की आशंका हो सकती है।

8. अपने या पर के गृह से बाहर जाते समय माता-पितादि से या गृह के स्वामी आदि से कि मैं (निश्चित जगह) जा रहा हूँ ऐसा बोलना चाहिए।

9. रास्ते पर चलते समय योग्य रास्ते से बायीं तरफ से (अपने बायें हाथ की तरफ से) न अधिक तेज और न अधिक धीमी चाल से तथा न बार-बार पीछे मुड़कर देखते हुए दया की भावना साथ चलना चाहिए।

10. बीच रास्ते में खड़े नहीं रहना चाहिए और न ही बैठना चाहिए, न ही वाहन खड़े करके रखना चाहिए, न ही मल-मूत्रादिक का क्षेपण करना चाहिए क्योंकि ऐसा करने से स्त्री-पुरुषों या तिर्यंचादि को बाधा उत्पन्न हो सकती है।

11. रात्रि में प्रतिदिन 9-10 बजे के बाद देर से गृह आदि में नहीं आना चाहिए। क्योंकि विशेष (जोर से) शब्द होने से गृह के एवं आजू-बाजू के लोगों को बाधा उत्पन्न होती है।

12. गन्दे चित्र वाली फिल्म जैन लोगों को नहीं देखना चाहिए क्योंकि ऐसी फिल्मों के देखने से माता-पिता एवं बच्चों इत्यादिक का चरित्र बिगड़ सकता है एवं बच्चों का माता-पिता के प्रति आदर, विनय भाव समाप्त हो जाता है।

13. अपने खास रिश्तेदारों को छोड़कर अन्य किसी अकेली स्त्री से अकेले पुरुष को एवं अकेले पुरुष से अकेली स्त्री को एकांत में नहीं बोलना चाहिए क्योंकि शील खतरे में न पड़ जाए ऐसा ध्यान रखना आवश्यक है क्योंकि यह कार्य दूसरों को संदेह एवं स्वयं को भयभीत होने में कारण है। इसी भयभीतपने से एवं अन्याय से ब्लडप्रेशर एवं हार्टअटैक आदि बीमारियों का शिकार होना पड़ता है।

14. किसी अन्य योग्य व्यक्ति के घर में विशेष आग्रह के उपरांत भोजन ग्रहण करना चाहिए। अव्रती श्रावकों को किसी के गृह में ज्यादा दिन रुकने पर उस गृह में या गृह के मुख्य सदस्य को कुछ धन राशि या योग्य भोजन सामग्री दे देनी चाहिए तथा उस गृहस्थ के द्वारा अपनी शक्ति के अनुसार शुद्ध थोड़े या ज्यादा अथवा सरस या नीरस आहार के कराये जाने पर भी अन्त समय उसे धन्यवाद ही देना चाहिए जिससे आगे वात्सल्य बना रहे क्योंकि सभ्यता के लिए यह भी एक अच्छा शिष्टाचार है।

15. किसी व्यक्ति (या संस्था) की कोई वस्तु, वस्तु के स्वामी द्वारा निश्चित किए गए समय के भीतर ही उसके स्वामी को वापिस लौटानी चाहिए। अगर प्रमाद से थोड़ी भी देर हुई तो अच्छी तरह से वस्तु के स्वामी से क्षमा याचना करना चाहिए और अगर ऐसे कार्य के प्रति दण्ड निश्चित किया गया है तो सहजता से उस दण्ड को स्वीकार करना चाहिए जिससे आगे लेन-देन की परम्परा निर्बाध रूप से चलती रहे। धन्यवाद कहकर जाये तो अति उत्तम होगा।

16. अन्य जाति विवाह, विधवा विवाह, रात्रिभोज, भोज में जमीकंद का प्रयोग, मृत्युभोज, दहेज प्रथा, गर्भपात आदिक से हो रही जैनाचार व अहिंसा की हानि को दूर कर धर्म की प्रभावना करना चाहिए।

17. अपने से बड़ों के प्रति (माता-पिता, भाई-बन्धु आदि से) बोलचाल-चर्चा आदि के समय नम्र (नीचे की ओर) दृष्टि रखना चाहिए क्योंकि यह उनकी विनय है

और अच्छा शिष्टाचार है। शिक्षाप्रद बात सुनते ही 'ठीक है' ऐसा नमस्कार की मुद्रा में स्वीकारता का अभिप्राय प्रकट करना चाहिए।

18. संतानों की उत्पत्ति बंद करने हेतु परिवार नियोजन कराना धर्म नहीं, ब्रह्मचर्य व्रत लेना ही धर्म है। क्योंकि गुप्तेन्द्रियों के छेद करने व करवाने से नपुसंक वेद का आस्रव होता है।

19. कभी अपने से बड़े एवं समान उम्र वाले या त्यागी व्रती लोगों से बात करते समय उनको एक वचन से नहीं पुकारना चाहिए क्योंकि यह उनकी अविनय या अनादर का प्रतीक है। उन्हें हमेशा आप इत्यादिक रूप बहुवचनों से पुकारना चाहिए यह अच्छी सभ्यता का प्रतीक है। न ही उनसे आदरणीय शब्दों की चाहना करना चाहिए क्योंकि यह अभिमान का कारण है।

विशेष – यहाँ जो धार्मिक एवं सामाजिक, क्षेत्र संबंधी विशेष अनुभव से शिष्टाचार (नैतिक शास्त्र, रूप नियम) लिखे गये हैं उन्हें जो व्यक्ति जितनी अच्छी तरह से पालन करते हैं वे पाप से बचते हुए धर्म एवं समाज के क्षेत्र में बड़ी उन्नति को प्राप्त होते हैं। पुराने गुरुकुलों में इसी तरह के शिष्टाचार एवं नैतिकता की शिक्षा दी जाती रहीं हैं।

जैन भव्यात्माओं के कर्तव्य –

1. अहिंसा के पालन एवं पाप से बचने के लिए अष्ट मूलगुण (मद्य-मधु-मांस एवं बड़, पीपल, ऊमर, कठूमर और पाकर फलों का त्याग) का नियम होना चाहिए।

2. पाप से बचने के लिए, लोक निंदा से बचने के लिए, अहिंसा पालन के लिए और राज्य दण्ड से बचने के लिए सप्त व्यसन (जुआ, चोरी, शिकार, मांस, शराब, परस्त्री सेवन और वेश्यागमन) का त्याग करना चाहिए।

3. बीड़ी, सिगरेट, तम्बाकू एवं तम्बाकू वाला गुटखा आदिक नशीले पदार्थ अवश्य त्याग करना चाहिए क्योंकि तम्बाकू वाली वस्तु में निकोटिन पाइजन (विष) होता है जिससे केंसर जैसा महाभयानक रोग होता है जो अल्प समय में ही जीवन समाप्त कर देता है।

4. पुरुष वर्गों को दूसरी स्त्रियां जो अपनी आयु से बड़ी हैं उन्हें माँ या बहन के समान और जो समान उम्र की हैं उन्हें बहन के समान एवं जो अपने से

छोटी उम्र वाली हैं उन्हें बहन या बेटी के समान देखना चाहिए। इसी तरह महिला वर्गों को दूसरे पुरूषों के लिए पिता, भ्राता एवं बेटे के समान देखना चाहिए।

5. पाप कर्म के क्षय के लिए एवं मोक्ष प्राप्ति के लिए नित्य मंदिर में आकर वीतराग भगवान का या वीतराग देव-शास्त्र-गुरु का दर्शन करना चाहिए।
6. स्नान करके हाथ, पैर, मुख स्वच्छ करके एवं शुद्ध वस्त्रों के साथ मंदिर जाना चाहिए।
7. श्रावकों को नित्य प्रात:, मध्याह्न, सायंकाल इन तीनों कालों में मंदिर आना चाहिए और इन तीनों कालों में से प्रात:काल में मंदिर आना ज्यादा श्रेष्ठ है।
8. जैन धर्म पालन के लिए एवं मंदिर या चौके (रसोईघर) में आने के लिए हिंसा से निर्मित चमड़े की वस्तुएँ एवं नेलपालिश, लिपिस्टिक आदि वस्तुओं का त्याग करना चाहिए।
9. मंदिर में प्रवेश करते समय निस्सही-निस्सही-निस्सही बोलना चाहिए एवं मंदिर से बाहर आते समय अस्सही-अस्सही-अस्सही बोलना चाहिए।
10. महिलाओं को भगवान एवं गुरु का दर्शन करते समय पाँच, सात हाथ दूर से ही दर्शन करना चाहिए।
11. भगवान एवं मुनि महाराज को नमस्कार करते समय नमोस्तु-नमोस्तु-नमोस्तु बोलना चाहिए और ऐलक, क्षुल्लक को नमस्कार करते हुए इच्छामि ऐसा बोलना चाहिए। इसी तरह आर्यिकाजी को वंदामि एवं क्षुल्लिकाजी को इच्छामि बोलना चाहिए। जैन पाठशाला में पढ़ने वाले विद्यार्थियों को गृहस्थ गुरुजी से एवं विद्यार्थी एवं श्रावकों को आपस में ''**जय जिनेन्द्र**'' ऐसा बोलना चाहिए।
12. शास्त्र (जिनवाणी) की विनय हेतु एवं अपने ज्ञान की शीघ्र वृद्धि हेतु धार्मिक पुस्तक (शास्त्र) को नीचे जमीन पर नहीं रखना चाहिए, लाँघना नहीं चाहिए एवं अशुद्ध अवस्था में देव-शास्त्र-गुरु और जपमाला को नहीं छूना चाहिए।
13. सूर्यास्त हो जाने के समय सूर्य की अल्ट्रावायलेट किरणों के अभाव में वातावरण में अनेक सूक्ष्म जीवों की उत्पत्ति होना चालू हो जाती है तथा वे जीव भोजन को अशुद्ध बना देते हैं और ऐसे अशुद्ध भोजन को करने से बहुत हिंसा का दोष लगता

है और आज के यांत्रिक विज्ञान के अनुसार रात्रि भोजन करने से शरीर अस्वस्थ हो जाता है, इसलिए रात्रि भोजन का त्याग करना चाहिए । यह भी भव्यों का एक संयम रूप कर्तव्य है।

14. एक बूँद बिना छने पानी में विज्ञान के अनुसार माइक्रोस्कोप (सूक्ष्मदर्शी) यंत्र से देखने पर 36450 त्रस जीव पाए जाते हैं। एक नए प्रयोग में इलेक्ट्रान माइक्रोस्कोप से देखने पर 5 लाख तक त्रस जीव जाए गए हैं, परन्तु जैन धर्म के अनुसार इससे भी ज्यादा (असंख्यात) जीव पाए जाते हैं। ऐसे पानी को पीने से बहुत त्रस जीवों की हिंसा होती है और प्राणी का शरीर भी अस्वस्थ हो जाता है इसलिए अहिंसा पालन एवं शारीरिक स्वस्थता के लिए छानकर पानी पीना चाहिए। पानी छानने का छन्ना इतना मोटा होना चाहिए जिसे दिन में आँखों के सामने लाने पर सूर्य-प्रकाश भी न दिखे तथा पानी छानते समय बर्तन पर रखे छन्ने पर पानी डालने पर पानी धीरे-धीरे छनकर बर्तन में जाए। जीव हिंसा से बचने हेतु जहाँ से (कुए या नदी से) पानी निकाला है उसी पानी में छाने हुए पानी की जीवानी को विधिपूर्वक (कुन्देवाली बाल्टी से नीर सतह पर) लौटाना चाहिए।
15. सामान्य लोगों को ध्यान देना चाहिए कि हम जिस तरह के भी जल का उपयोग कर रहे हैं वह किसी छानने के उपकरण से छना है या नहीं; ऐसा यदि ध्यान नहीं दिया गया तो अनछने जल को गर्म करना महा हिंसा का कारण एवं पीना अस्वस्थ अवस्था का भी कारण है।
16. पूजन के समय गंधोदक (गंध सहित जल) के अलावा कोई भी योग्य खाने-पीने के पदार्थों को भगवान से या पञ्च परमेष्ठी से दो-चार हाथ दूर चढ़ाना चाहिए।
17. सच्चे देव-शास्त्र-गुरु के लिए पूजन में समर्पित कर दिए गए द्रव्य (निर्माल्य) को पुन: ग्रहण नहीं करना चाहिए।
18. अपने ग्राम या नगर के मंदिरों में विराजमान मूलनायक भगवान का नाम अवश्य याद रखना चाहिए।
19. नित्य पञ्च परमेष्ठी के नाम का (णमोकार मंत्र) दु:खों से दूर होने के लिए एवं पुण्यार्जन तथा कर्म निर्जरा हेतु नियम से जप करना चाहिए।

देव दर्शन का फल –

1. जब कोई जिनेन्द्र प्रभु के दर्शन करने का विचार करता है तो उसे 2 उपवास का फल मिलता है।
2. फिर मंदिर जी जाने का उद्यम करता है तो उसे 3 उपवास का फल मिलता है।
3. मंदिर जी जाने का आरंभ आदि करता है तो उसे 4 उपवास का फल मिलता है।
4. मंदिर जी जाने लगता है तो उसे 5 उपवास का फल मिलता है।
5. कुछ दूर पहुंचने पर 12 उपवास का फल मिलता है।
6. घरे से मंदिर जी के रास्ते के बीच में पहुंचने पर 15 उपवास का फल मिलता है।
7. मंदिर जी के शिखर का दूर से दर्शन करने से एक माह के उपवास का फल मिलता है।
8. मंदिर जी के आंगन में प्रवेश करने पर छः माह के उपवास का फल मिलता है।
9. मंदिर जी के द्वार में प्रवेश करने पर एक वर्ष के उपवास का फल मिलता है।
10. वीतराग भगवान जी की परिक्रमा करने से सौ वर्ष के उपवास का फल मिलता है।
11. जिनेन्द्र भगवान की वीतराग मुद्रा को एकटक देखने से एक हजार वर्ष के उपवास का फल मिलता है।
12. जिनेन्द्र भगवान की स्तुति पूर्वक पूजा करने से अनंतानंत वर्षों के उपवास का फल मिलता है।

[वास्तव में जिनेन्द्र भगवान के दर्शन से बढ़कर कोई दूसरा पुण्य नहीं]

– सन्दर्भ – पद्मपुराण, पर्व 32, श्लोक 178 से 182 तक।

तृतीय सोपान

नियम दर्पण

''जैन श्रावक भव्यात्माओं के द्वारा अपनी शक्ति अनुसार ग्रहण करने योग्य 122 नियम''

(इन नियमों पर पेन्सिल से निशान लगावें व गुरुवर से निवेदन कर आशीष लें।)

1. सप्त व्यसन (जुआ, चोरी, शिकार, माँस, शराब, परस्त्री सेवन और वेश्यागमन) का आजीवन के लिए त्याग।
2. अष्ट मूल गुण का नियम अर्थात् मद्य, मधु, माँस एवं बड़, पीपल, ऊमर, कठूमर और पाकर इन फलों का त्याग।
3. रात्रि भोजन का त्याग – (सब कुछ या पेय की छूट–आजीवन या कुछ वर्ष)।
4. नित्य जिनेन्द्र देव दर्शन – (बीमारी और सफर में छूट) ।
5. पानी छानकर पीना – (मात्र घर में या सभी जगह) ।
6. चमड़ा निर्मित वस्तुओं (जूता, चप्पल, बेल्ट, बेग, पर्स इत्यादि) का आजीवन के लिए त्याग।
7. हिंसा से निर्मित नेल पालिश, लिपिस्टक, साबुन आदि का आजीवन के लिए त्याग।
8. रेशम से निर्मित साड़ी, कुर्ता इत्यादि वस्त्रों का जीवन पर्यंत त्याग।

9. रोज णमोकार मंत्र की जप माला करने का नियम।
10. आगम ग्रन्थों के स्वाध्याय करने या सुनने का नियम – (बाहर या बीमारी की अवस्था में छूट)
11. रोज या सप्ताह में एक बार अष्ट द्रव्य से वीतरागी देव-शास्त्र-गुरु की पूजन करने का नियम (बाहर या बीमारी की अवस्था में छूट)।
12. कंद मूल (आलू, गाजर, मूली, प्याज, लहसुन, गीला अदरक, शकरकंद आदि) का आजीवन के लिए त्याग।
13. चमड़े में रखे गए खाद्य पदार्थों का त्याग।
14. तम्बाकू, सिगरेट, बीड़ी, भाँग, गांजा, अफीम, गुटखा इत्यादिक नशीली वस्तुओं का आजीवन के लिए त्याग।
15. निर्माल्य (पूजा में अर्पित द्रव्य) खाने का आजीवन के लिए त्याग।
16. नित्य भक्तामर स्तोत्र पढ़ने या सुनने का नियम (बाहर की छूट)।
17. भगवान आदि के सामने आजीवन के लिए नारियल फोड़ने का त्याग।
18. रात्रि में शयन करने के पहले एवं सुबह शयन से उठने पर वीतराग भगवान का नाम स्मरण रूप णमोकार मंत्र का नौ बार अथवा एक सौ आठ बार जप करने का नियम।
19. किसी भी जीव को जानकर नहीं मारेंगे ऐसा नियम।
20. पटाखे फोड़ने और आतिशबाजी करने का आजीवन के लिए त्याग।
21. पान पराग या सुपारी खाने का आजीवन के लिए त्याग।
22. बैंगन (भटे) का आजीवन के लिए त्याग।
23. हिंसक वस्तुएँ (अस्त्र, शस्त्र, चमड़ा, कीटनाशक दवाईयां, हिंसक एवं अशुद्ध वस्तुओं से बने सामान) बेचने का त्याग।
24. रोज या अष्टमी-चतुर्दशी को जैन मंदिर की दान पेटी में कुछ पैसा डालने का नियम।
25. बेर खाने का आजीवन के लिए त्याग।

26. बाजार की आइस्क्रीम खाने का आजीवन के लिए त्याग।
27. बाजार में तैयार हुई मिठाई आदि वस्तुओं का मंदिर में चढ़ाने का हमेशा के लिए त्याग।
28. अमर्यादित या त्रस जीवों से सहित अशुद्ध पूजा-सामग्री का मंदिर में ले जाने का आजीवन के लिए त्याग।
29. मंदिर के अन्दर या भगवान के सामने शयन करने एवं विकथा (सांसारिक या पाप कथा) करने का हमेशा के लिए त्याग।
30. क्षुधादिक (भूख, प्यास आदि) अठारह दोषों से रहित वीतराग भगवान के ऊपर अभिषेक के रूप में गंधोदक के अलावा अन्य वस्तुएँ डालने एवं डलवाने का त्याग।
31. प्रतिदिन कुछ समय तक मौन व्रत रखने का नियम।
32. दिन में भोजन एक दो या तीन बार करने का नियम हमेशा के लिए – (सब कुछ या पेय की छूट)।
33. बाजार में बने अशुद्ध आहार करने का आजीवन के लिए त्याग।
34. चाय पीने का त्याग।
35. कॉफी पीने का त्याग।
36. सेन्ट (इत्र) लगाने का हमेशा के लिए त्याग।
37. द्विदल खाने का आजीवन के लिए त्याग – (दही या छाँछ के साथ दो दल होने वाली दालों के खाने का त्याग जैसे दही बड़ा, छाँछ और बेसन को मिलाकर बनी कढ़ी)।
38. पान खाने का हमेशा के लिए त्याग।
39. भोजन करने के पहले एवं अन्त में नौ बार णमोकार मंत्र पढ़ने का नियम।
40. भोजन करते समय मौन रहने का नियम।
41. शैम्पू लगाने का हमेशा के लिए त्याग।
42. पाउडर, क्रीम लगाने का हमेशा के लिए त्याग।

43. ब्रह्मचर्य व्रत - अष्टमी, चतुर्दशी, दशलक्षण पर्व, अष्टाह्निक पर्व में अथवा एक पक्ष, मास के लिए अथवा एक, दो, तीन आदि वर्ष या आजीवन के लिए (अविवाहित जन अपने माता-पिता आदिक की अनुमतिपूर्वक और विवाहित जन अपनी स्त्री या पुरुष से अनुमतिपूर्वक यह व्रत ग्रहण करें)।
44. शुद्ध वस्त्रों के साथ मर्यादा सहित शुद्ध भोजन करने का नियम।
45. फिल्म देखने का एवं फिल्मी गाने सुनने का त्याग।
46. फूल या फूल माला पहनने, पहनाने का आजीवन के लिए त्याग।
47. अपव्ययादि से बचने के लिए वायुयान में जाने का त्याग।
48. बिना अनुमति के किसी की कोई वस्तु उठाने का सदा के लिए त्याग या किसी की वस्तु पर अधिकार जमाने का त्याग।
49. चोरी की वस्तु खरीदने एवं बेचने का हमेशा के लिए त्याग।
50. धर्म के क्षेत्र में भी झूठा बनावटी बोलने एवं झूठे लेख लिखने का आजीवन के लिए त्याग।
51. दूसरों की निंदा (बुराई) करने तथा सुनने का हमेशा के लिए त्याग।
52. मक्खन खाने का आजीवन के लिए त्याग।
53. चौबीस घण्टे के बाहर मर्यादा वाले अचार, मुरब्बा खाने का आजीवन का त्याग।
54. वर्ष में एक बार आवश्यक रूप से तीर्थ क्षेत्र या अतिशय क्षेत्र के दर्शन करने का नियम।
55. तीर्थ यात्रा हेतु या धार्मिक दान हेतु अपने व्यापार में लाभ में से शक्ति अनुसार प्रतिदिन कुछ पैसे संग्रह करने का नियम।
56. अष्टमी-चतुर्दशी या दशलक्षण, अष्टाह्निक, सोलहकारण आदिक पर्व दिनों में साबुन या सुगंधित तेल इत्यादिक लगाने का त्याग एवं बाल कटवाने का त्याग।
57. चार-छह मास में वीतराग प्रतिमाओं का मंजन (मांजकर स्वच्छ करना) एवं शास्त्रों को व्यवस्थित करने का नियम (प्रतिमाओं का मंजन पुरुष लोग ही मात्र शुद्धता के साथ करें)।

58. रात्रि में तैयार किए गए भोजन का त्याग और जिसमें जीव जन्तु पड़ गए हैं ऐसे पेय आदि समस्त आहार का त्याग।
59. नौकरों द्वारा बनाए गए भोजन का त्याग।
60. भगवान या गुरु के दर्शन के बाद दूध पानी आदि पेय ग्रहण करने का नियम।
61. प्रतिदिन मंदिर जाकर तीन बार देव दर्शन करने का नियम।
62. बाजार में बने ब्रेड, बिस्कुट आदि खाने एवं दूसरों को खिलाने का त्याग (क्योंकि बाजार में ये वस्तुएँ अशुद्ध, अमर्यादित, घुने, जीवोत्पत्ति सहित धान्य पदार्थों से बनाई जाती हैं)।
63. बाजार के चॉकलेट, गोलियां आदि खाने और खिलाने का त्याग (क्योंकि इसमें आज कोई-कोई लोग अण्डादि मांस आदि मिलाने लगे हैं)।
64. हिंसा से निर्मित टूथ पेस्ट एवं टूथ पाउडर का त्याग।
65. हिंसा से निर्मित हीमोग्लोबिन टॉनिक, ऊस्टर शैल की कैल्शियम गोली एवं प्लाज्मा प्रोटीन्स आदि का त्याग।
66. केप्सूल खाने का त्याग (क्योंकि केप्सूल की जिलेटिन हिंसा अर्थात हड्डी से बनती है)।
67. हिंसक इन्सुलिन दवाई का त्याग (क्योंकि इसे सुअर आदिक जानवरों के आमाशय के पदार्थ से बनाया जाता है)।
68. हिंसा से निर्मित होम्योपैथिक दवाईयों का त्याग।
69. लाख की चूडियों के पहिनने का त्याग (क्योंकि एक किलो लाख की प्राप्ति में 3 लाख कीड़ों की हिंसा होती है)।
70. हिंसा से बनी हाथी दांत की चूड़ियों के पहिनने का त्याग।
71. बिना चप्पल, जूते पहने मंदिर जाने का और तीर्थ वंदना करने का नियम।
72. स्वस्थ अवस्था में मंदिर एवं तीर्थ वंदना पैदल करने का नियम।
73. स्वस्थ अवस्था में दिन में नींद लेने का त्याग।
74. तीर्थ यात्रा में ब्रह्मचर्य व्रत रखने का नियम।

75. मंदिर में भगवान या गुरु के पास धन वैभवादि सांसारिक वस्तुएँ मांगने या चाहने का त्याग।
76. जो निर्माल्य (पूजा द्रव्य) खाता है उसके घर में भोजन करने का त्याग।
77. अकेली पर स्त्री या अकेले पर पुरुष से बातचीत न करने का नियम।
78. दिन में ब्रह्मचर्य व्रत रखने का नियम।
79. दशलक्षण पर्व या अन्य पर्व के दिनों में हरी सब्जियों का त्याग।
80. हरी पत्तियों के खाने का त्याग।
81. जिनमें सार भाग न के बराबर हो और बीज बहुत अधिक हों ऐसे फलों का त्याग।
82. कुछ काल तक या आजीवन के लिए शृंगार, आभूषणों का त्याग।
83. कुछ काल तक या आजीवन के लिए सफेद वस्त्रों के अलावा रंगीन वस्त्रों के पहिनने का त्याग।
84. देशी (आयुर्वेदिक) अहिंसक औषधियों के अलावा इंग्लिश दवाईयों का त्याग।
85. कुछ काल के लिए अर्थात् चातुर्मास, सोलहकारण पर्व, दशलक्षण पर्व, अष्टाहिन्क पर्व के दिनों में या आजीवन वाहन में बैठने का त्याग।
86. कुछ काल तक या आजीवन के लिए चटाई, काष्ठ के अलावा बिस्तर पर लेटने का त्याग।
87. एक दिन, कुछ दिन या आजीवन के लिए फेन, कूलर के उपयोग करने का त्याग।
88. कुएं, नदी, झरना और वर्षा के पानी के अलावा पाइप लाइन, बोर, तालाब आदि के पानी ग्रहण करने का त्याग।
89. कुछ दिन के लिए या आजीवन दो, तीन जोड़ी वस्त्र रखने का निमय।
90. कुछ दिन के लिए या आजीवन के लिए पत्र-व्यवहार या टेलीफोन व्यवहार करने का त्याग।
91. किसी विशेष दिन, किसी व्रती को आहार कराने का नियम।
92. मुनि महाराज की आहार बेला टालकर (आहार बेला निकल जाने पर) आहार

ग्रहण करने का नियम।
93. कोई विशेष दिन या कुछ दिनों के लिए मात्र पेय पदार्थ लेऊँगा ऐसा नियम।
94. कोई विशेष दिन या कुछ दिनों के लिए सभी फलों का त्याग।
95. आगे-पीछे के दिन एकासन के नियम के साथ बीच में उपवास अर्थात् प्रोषधोपवास करने का नियम।
96. किसी के चौके में किसी की खाद्य वस्तु बिना अनुमति के उठाकर किसी त्यागी, मुनि को देने का त्याग।
97. धर्म क्षेत्र में अपने द्वारा बोली गई बोली का पैसा एक माह से अधिक दिन तक अपने पास रखने का त्याग। तुरन्त देना सबसे अच्छा है।
98. भगवान, शास्त्र और दिगम्बर गुरुओं की पूजा या वैयावृत्त करने के बदले में पैसे लेने का त्याग।
99. कुदेवादिक अनायतनों की पूजा एवं अनायतनों के निर्माण कार्य हेतु दान देने का त्याग।
100. सेवकों, पशु आदिकों पर भी मात्रा से अधिक भार लादने (रखने) का एवं उन्हें पीटने (मारने) का त्याग।
101. बूढ़े पशुओं को बेचने का त्याग (बूढ़े या नाकाम पशुओं के लिए गौ-रक्षा शालाओं में भेज सकते हैं)।
102. बिना प्रयोजन के वनस्पति छेदने-भेदने एवं उसे मात्रा से अधिक तोड़ने का त्याग।
103. स्त्रियों या पुरुषों की अप्रयोजनीय (या राग युक्त) कथा कहने सुनने या अप्रयोजनीय हँसने का त्याग।
104. बिना प्रयोजन (अनुपयोग रूप) पृथ्वी खोदने, पानी बहाने (सींचने), अग्नि जलाने, पंखा आदिक से हवा चलाने का त्याग।
105. बिना प्रयोजन घूमने, दूसरों को घुमाने एवं बकवास करने का त्याग।
106. जब तक एक शास्त्र का स्वाध्याय पूर्ण नहीं होता तब तक के लिए कोई एक योग्य वस्तु के उपयोग नहीं करने का नियम।

107. पूजा और स्वाध्याय के बीच में भोजन, व्यापार आदि सांसारिक वार्ता करने का त्याग।

108. शिष्टाचार हेतु खड़े-खड़े थूकने या मूत्रादिक के क्षेपण करने का त्याग।

109. पादत्राण (जूता, चप्पल) खोलकर और खड़े-खड़े बिना एवं पैर लटकाये बिना भोजन-पानी ग्रहण करने का नियम (शिष्टाचार सभ्यता के लिए)।

110. रात्रि में भगवानादिक की द्रव्य पूजा नहीं करने का नियम (क्योंकि रात्रि में जीवोत्पति अधिक होती है जिस कारण पूजन-सामग्री अशुद्ध हो जाती है)।

111. रात्रि विवाह, मृत्यु भोज एवं दहेज प्रथा आदिक कुरीतियों का त्याग।

112. कुछ काल या आजीवन के लिए निश्चित सीमा से बाहर जाने का त्याग।

113. दिन में तीन बार या एक दो बार सामायिक करने का नियम।

114. बिना गरम किए गए या अप्रासुक आहार-पानी ग्रहण करने का त्याग।

115. दिन में भगवान की या सच्चे देव-शास्त्र गुरु की प्रासुक (अचित्त, सूखे) द्रव्य से पूजन करने का नियम।

116. क्षुधादिक अठारह दोषों से रहित भगवान के तीन-चार हाथ दूर पूजा द्रव्य चढ़ाने का नियम।

117. रात्रि में अन्य किसी को भी भोजन कराने या रात्रि में भोजन कराने की अनुमोदना करने का त्याग।

118. प्रतिवर्ष एक नया शास्त्र या जीर्ण, अनुपलब्ध समीचीन शास्त्र प्रकाशन करने का नियम।

119. कोई विशेष दिन षट् रसों में से कोई एक-दो आदि रसों के त्याग का नियम।

120. कोई विशेष तिथि या पर्व में उपवास रखने का नियम।

121. कोई भी नियम लेते समय नौ बार णमोकार मंत्र पढ़ने का नियम।

122. कोई भी छोटा-से-छोटा नियम भंग हो जाने पर उसके पालन में शिथिल हो जाने पर दिगम्बर समीचीन गुरु के पास प्रायश्चित्त ग्रहण करने का नियम (प्रायश्चित्त तुरन्त या जब गुरु मिलें तब ग्रहण करें)।

विशेष :

- इन नियमों में से पाप से बचने के लिए अशुद्ध पदार्थ या बुरी बातें आजीवन त्याग करने योग्य हैं और अपनी इच्छाओं के निरोध के लिए शुद्ध पदार्थ या इन्द्रिय विषय अपनी शक्त्यनुसार कुछ दिन या आजीवन के लिए त्याग करने योग्य है।
- एक आरम्भ, परिग्रह से सहित गृहस्थ भी इन सभी नियमों का पालन कर सकता है और इससे बड़े-बड़े साधकों के लिए भी नियमों के पालन का अवसर मिल सकता है।
- इन नियमों के पालन से कर्म निर्जरा, अतिशय पुण्य का संपादन, दु:ख का एवं विघ्नों का नाश रूप फल प्राप्त होता है।
- कोई भी नियम भूल से या प्रमाद से खण्डित होने पर या उसमें दोष लगने पर उसे पूर्ण रूप से छोड़ना नहीं चाहिए एवं आगे अपनी सीमा तक पालन करते रहना चाहिए क्योंकि भूल सुधार कर उसे आगे पालन करते रहने से कम प्रायश्चित्त होता है और सीमा से पहले ही छोड़ देने से अधिक प्रायश्चित्त होता है। अपने प्रमाद या परिस्थिति से खण्डित या सातिचार रूप हुए नियम या व्रत का अपना आत्म स्थितिकरण हेतु निर्ग्रन्थ गुरु से प्रायश्चित्त अवश्य लेना चाहिए। क्योंकि निर्ग्रन्थ गुरु (मुनि) से प्रायश्चित्त हेतु निवेदन कर अपना अपराध कह देने से 50% पाप धुल जाता है और प्रायश्चित ग्रहण कर लेने से 75% पाप गल जाता है तथा प्रायश्चित्त पूर्ण हो जाने पर 100% पाप नष्ट होकर आत्म स्थितिकरण पूर्ण होकर आत्मा पापों के भार के उतरने से बड़े हल्केपन का अनुभव करता है।

चतुर्थ सोपान

गोमटेश प्रार्थना अष्टक

ऋषभ देव के योग्य पुत्र जो, कामदेव के पद-धारी।
त्याग राज्य को बने तपस्वी, पूर्ण हुए वे अविकारी॥
भरतादिक नृप चरणों में जा, संस्तुतिकर नत माथ हुए।
बाहुबली जी निर्विकल्प हो, चिन्मय गुण के साथ हुए ॥ 1 ॥

एक वर्ष उपवास नियम से, अडिग रूप हो ध्यान किया।
भय ममता को छोड़ आपने, समता का रस पान किया ॥
शुक्ल ध्यान की अग्नि से फिर, मोह शत्रु का नाश किया।
बने केवली बाहुबली जी, अक्षय सुख को प्राप्त किया ॥ 2 ॥

वीतराग मय गोमटेश ये, दिग्-अम्बर बन खड़े हुए।
देवों से भी अतिशयकारी, महाकीर्ति से बढ़े हुए ॥
इस अम्बर की शोभा श्री को, मेरु सदृश बढ़ा रहे।
स्वयं ध्यान की आभा से ये, शान्ति सुधा को बहा रहे॥ 3 ॥

बिन बोले सन्देश दे रहे, मोक्ष-मार्ग का हे स्वामी।
पाप तजो सभी बनो मुमुक्षु, यही जगत को सुख नामी॥
जैन धर्म का मूल रहा जो, दया, शील को अपनाओ।
इन्द्रिय विजयी श्रमणमार्ग से, ध्यान सिद्धिकर शिव पाओ ॥ 4 ॥

धर्म-भाव से भरे यहाँ पर, लोग हजारों आते हैं।
दर्शन पा वे गोमटेश का, सम्दर्शन अपनाते हैं॥
त्यागमयी यह मुद्रा लखकर, स्वयं त्याग कुछ करते हैं।
तव चरणों में ध्यान लगाते, आत्मिक सुख को पाते हैं ॥ 5 ॥

बड़े पुण्य से बाहुबली जी, तव दर्शन भविजन पाते।
सब चिन्ताएँ विषय खेद को, भक्त भूल हैं वे जाते ॥
उत्तम निर्मल भाव जगाते, संस्तुति करते गुण गाते ।
अशुभ कर्म को धोते हैं जन, पुण्य खजाना वे पाते ॥ 6 ॥

गोमटेशजी तव दर्शन से, मन मेरा ना हटता है।
नहीं लौट जाए प्रभु ऐसा, मम मानस यह कहता है॥
प्रतिमा में क्या? मंत्र भरा जो, मुग्ध हमें कर लेता है।
अद्‌भुत मनोग्य मूरत को यह, हृदय खींच भर लेता है ॥ 7 ॥

धन्य हुए तुम अनुपम पद पा, अनंत गुण के हो स्वामी।
श्रमण केवली परमेश्वर हो, भव्यों को सुख दें नामी॥
बाहुबली श्री गोमटेश जी, तव चरणों को नमता मैं।
बन जाऊँ तुम सम मैं स्वामी, यही प्रार्थना करता मैं ॥ 8 ॥

गोम्मट के तुम ईश हो, बाहुबल भी अपार ।
आर्जव का सागर भरो, हो जाऊँ भव पार ।।

'गोमटेश थुदि' का पद्यानुवाद

नीलाम्बुज की पाँखुड़ियोंसम, जिनके नयन सुशोभित हैं।
पूर्णचन्द्र सम मुखमंडल अति-सुखकर अनुपम हर्षित है ॥
सुन्दर नासा ने जीता है, चम्पक पुष्प सु-शोभा को।
नित नमते हम गोमटेश के, शिवपुर जाने चरणों को ॥ 1 ॥

मेघ रहित नभ निर्मल जल सम, जिनके कपोल द्वय प्यारे।
झूम रहे हैं सुकर्ण जिनके, आ कन्धों पर वे न्यारे ॥
इन्द्र-गजों की सुण्डा सदृश, दोनों भुजा समुज्ज्वल हैं।
गोमटेश के चरणाम्बुज नम, करते मन भवि उज्ज्वल हैं ॥ 2 ॥

जीत लिया तव सौम्य कण्ठ ने, दिव्य शंख की शोभा को।
विशाल एवं उदार देखो! हिम गिरि सम इन कंधों को ॥
सुदृढ़ मनोहर मध्य भाग जो, प्रेक्षणीय है शुभा रहा।
नित नमता मैं गोमटेश तव-रूप सभी को लुभा रहा ॥ 3 ॥

विंध्य शिखर पर तप की उत्तम, आभा से जो भासित हैं।
भव्य जनों की विरागता के, शिखामणि बन राजित हैं ॥
शरद पूर्णिमा के शशि सम जो, त्रिलोक में सुख दाता हैं।
कामदेव जिन बाहुबली को, हम नमते रख माथा हैं ॥ 4 ॥

ध्यान समय माधवी लताएँ, तन पर चढ़ लिपटीं जिनके।
भव्यों को हैं बहुफल देते, कल्पवृक्ष सम हो उनके ॥
देवेन्द्रों के समूह से भी, तव चरणाम्बुज अर्चित हैं।
नित नम लो! मन गोमटेश को, जो त्रिलोक में पूजित हैं ॥ 5 ॥

अम्बर त्यागे दिग् अम्बर बन, निर्भयता को धार लिया।
वस्त्रादिक से विरक्त होकर, पवित्र मन को बना लिया ॥
अचल मेरु सम खड़े हुए हो, सर्पादिक से नहीं डिगे।
बाहुबली जी तव चरणों से, मेरा मन न कहीं डिगे ॥ 6 ॥

भोगों की आशा से विरहित, निर्मल समकित धारी जो।
दोषों की जड़ मोह नष्ट कर, विषय सुखों के त्यागी वो ॥
वीतराग बन, भरत भ्रात में, शल्य नहीं वैरागी थे।
पहुँचे मुक्ति गोमटेश जी, नित नमते अविकारी थे ॥ 7 ॥

उपाधियों से मुक्त हुए थे, धन गृह से भी नहीं घिरे।
समता की महिमा के द्वारा, मोह मदों से हुए परे ॥
खड्गासन से एक वर्ष तक, उपवासों सह ध्यान किया।
गोमटेश जी समसुख पाने, तव पद में गुण गान किया ॥ 8 ॥

गोमटेश थुदि के रहे, कर्त्ता सुन्दर जान।
नेमिचन्द्र आचार्य को, ''आर्जव'' नमते मान ॥

श्रवण बेलगोला रहा, अतिशय क्षेत्र महान।
हुआ पद्य अनुवाद यह, जो जिन गुण की खान ॥

आचार्य श्री कुन्द-कुन्द स्तुति

अद्‌भुत ज्ञान सरोवर में है, तुमने चेतन नहलाई।
जग जन के उपकार हेतु है, आगम की महिमा गाई॥
मोह नाशकर आत्मध्यान है, किया छोड़ सब संग भवन।
अध्यातम के सागर मुनि उन, कुन्द-कुन्द को सदा नमन॥ 1॥

आंध्रदेश के कुण्ड-कुण्डपुर, में तुमने है जन्म लिया।
तमिलदेश के कुन्द-कुन्द इस, गिरि को तप से धन्य किया॥
समयसार आदिक चौरासी, पाहुड़ ग्रन्थों का लेखन।
अध्यातम के सागर मुनि उन, कुन्द-कुन्द को सदा नमन ॥ 2॥

विदेह क्षेत्र के तीर्थंकर उन, सीमन्धर को नमन किया।
पूर्व भवों के मित्र मुनीश्वर, सह विदेह में गमन किया॥
सीमन्धर उन तीर्थंकर का, किया दर्श पा समवसरण।
अध्यातम के सागर यतिवर, कुन्द-कुन्द को सदा नमन ॥ 3॥

तीर्थंकर से पाकर श्रुत को, आगम पथ दर्शाया था।
मिथ्यामत का खण्डन करके, शिवसुख मार्ग जगाया था॥
जैन दिगम्बर उत्तम पथ में, रमने वाले महा श्रमण।
अध्यातम के सागर ऋषिवर, कुन्द-कुन्द को सदा नमन ॥ 4॥

भवि उपकार हेतु आपने, भारत भू पर भ्रमण किया।
दीक्षा-शिक्षा देकर जन को, मोक्षमार्ग में ग्रहण किया॥
ऊर्जयन्त सम्मेदशिखर का, किया दर्श वा कर्म क्षपण।
अध्यातम के सागर ऋषिवर, कुन्द-कुन्द को सदा नमन ॥ 5॥

आज रहे जो मिथ्यावादी, सरागता को भजते हैं।
विरागता भी भजते तो भी, भव वांछा न तजते हैं॥
सम्यग्दर्शन, श्रावक पद का, पाहुड़ में है किया कथन।
अध्यातम के सागर गुरुवर, कुन्द-कुन्द को सदा नमन ॥ 6॥

राग त्यागते वैरागी जन, नहीं चाहते भव सुख को।
धन वैभव से मोह भाव ही, सदा ही देता जग दुख को॥
ऐसा सोचे जो वैरागी, उन्हें लिखी बारह भावन।
अध्यातम के सागर गुरुवर, कुन्द-कुन्द को सदा नमन ॥ 7॥

वीतराग बन आत्म ध्यान में, सदा लीन हैं जो मुनिजन ।
उन्हें समय का सार बताया, जिसका पल-पल हो चिन्तन ॥
सुख-दुःख में समता के धारी, आत्मिक सुख में करें रमण।
अध्यात्म के सागर गुरुवर, कुन्द-कुन्द को सदा नमन ॥ 8॥

दोहा

तमिल देश में क्षेत्र है, अध्यात्म की खान।
कुन्द-कुन्द गिरि को नमूँ, करूँ आत्म का ध्यान॥1॥

मुझे मिला सौभाग्य है, अनुपम सुन्दर जान।
इस गिरि पर मेरा हुआ, वर्षा-योग महान ॥ 2॥

बड़ी भावना से मुझे, मिला चरण का दर्श।
तुम जैसा ज्ञानी बनूँ, बनूँ श्रमण आदर्श ॥ 3॥

तव पद में ऋजुता भरी, मिलती सीख महान।
आर्जवसागर से बनूँ, कुन्द-कुन्द भगवान ॥ 4॥

शान्तिसागर विनयाञ्जलि अष्टक

वर्तमान में श्रमणमार्ग के, श्रेष्ठ सु-धारक आप रहे।
चौथे युग की चर्या के भी, ज्ञाता उत्तम आप रहे॥
घोर तपों बहु उपवासों से, कर्म बंध को शिथिल किया।
शान्तिश्री के पद कमलों में, मम मन ने यह नमन किया ॥ 1॥

जिनके पावन दर्शन पाने, श्रावक दौड़े आते थे।
अमृतमय गुरु सदुपदेश से, शान्ति-सुधा को पाते थे॥
त्याग, दया वा क्षमाशीलता, गुण जीवन में लाते थे।
शान्तिश्री की गौरवता को, सब मिल करके गाते थे ॥ 2॥

शूरवीर बन इस भारत की, तीर्थ वंदना जिनने की।
सत्य, दया की धर्म पताका, जग में फहरा जिनने दी॥
श्रमण जनों के दर्शन का ये, स्वप्न यहाँ साकार हुआ।
शान्तिश्री का जीवन दर्शन, जन-जन का हितदर्श हुआ ॥ 3॥

ज्ञानी, ध्यानी महाव्रती वे, स्वानुभवी व समधनी थे।
पूजा, ख्याति प्रलोभनों से, सुदूर वे शिरोमणी थे॥
अहंकार का नाम नहीं था, ओंकार से पूरित थे।
शान्तिश्री जी इस धरती पर, धर्ममार्ग की मूरत थे ॥ 4॥

सरल-वृत्ति का शान्त सरोवर, जिनमें है लहराता था।
स्याद्वाद के तट से बँधना, इस जग को सिखलाता था॥
सभी मतों से बने एकता, धर्म सूत्र हैं बतलाए।
जीव मात्र पर करुणा के थे, सबक आपने सिखलाए ॥ 5॥

मिथ्यारूपी अंधकार को, आगम पथ दे दूर किया।
सम्यग्दर्शन की किरणों से, मोक्ष सु-मार्ग प्रशस्त किया॥
वीर जवानों की सेना के, आप रहे आदर्श यति।
महा मनीषी महा सु-योगी, बढ़े आपकी शुभ कीर्ति ॥ 6॥

भगवन् देश व कूलभूषण के, परम भक्त हैं आप रहे।
समाधि लेकर उनके पद में, मरण विजेता आप रहे॥
संत शिरोमणि, महातपोधन, शान्ति-सागराचार्य श्री।
हम सब वंदन करते पद में, हमें मिले वह मुक्ति श्री ॥ 7॥

शान्ति, वीर अरु शिवसागर थे, ज्ञान, विद्या के आधार।
जिनके कदमों पर चल करके, बना "आर्जव" मैं अनगार॥
यही भावना गुरु चरणों में, नमन् करते हैं शत बार।
बने चेतना निर्मल मेरी, पाऊँ मुक्ति समता धार ॥ 8॥

चारित चक्री को नमूँ, कर्म चक्र नश जाय ।
शान्तिसागर सम बनूँ, परम शान्ति जग जाय ।।

विद्यासागर वंदनाष्टक

ज्ञानसागराचार्य श्री के, विद्यासागर शिष्य महा।
दृढ़ वैरागी यथाजात हैं, बहती समता सिन्धु जहाँ॥
निजातम के भेदज्ञान से, शुद्धातम को जो ध्याते।
नमन करें हम गुरु चरणों में, उनके गुण संस्तुति गाके ॥ 1॥

ध्यान-साधना अपूर्व जिनकी, समता का सौरभ देती।
जिनका दर्शन पाकर अखियाँ, कर्म-मैल को धो लेतीं॥
जिनकी अमृतवाणी सुनकर, प्राणी जय-जय करते हैं।
ऐसे विद्यासागर को हम, शत-शत वंदन करते हैं ॥ 2॥

भव-वन में हम भटक रहे थे, गुरुवर ने सन्मार्ग दिया।
कुम्भकार के सदृश हमको, साधक का आकार दिया॥
समयसार का सार बताकर, शिष्यों का उद्धार किया।
नमस्कार उन विद्या गुरु को, जिनने यह उपकार किया ॥ 3॥

रत्नत्रय के धारी गुरुवर, शिवपथ के हैं पथिक रहे।
धर्म-मार्ग के नायक हैं जो, मोह-जाल से पृथक रहे॥
जिन्हें, जगकी असारता का, चिंतन निश-दिन साथ रहा।
ऐसे गुरु के चरण कमल में, मेरा झुकता माथ रहा ॥ 4॥

जिनके हृदय में वात्सल्य की, धारा नियमित बहती है।
अनेकान्त मय सम्यक्वाणी, मिथ्यातम को हरती है॥
सिद्धान्तों का आलोढ़न जो, प्रति-दिन करते रहते हैं।
उन विद्या के सागर को हम, अन्तर मन से नमते हैं ॥ 5॥

दीक्षा-शिक्षा देने में जो, निपुणशील गुरुराज महा।
आवश्यक में दृढ़ धर्मी हैं, ना हैं लौकिक काम वहाँ॥
सिंहवृत्ति-सम चर्या के जो, पालक मम गुरु हैं न्यारे।
वंदन करते मिलें आपके, उत्तम गुण मुझको प्यारे ॥ 6॥

आचार्य बने, आचारों का, पालन करते-करवाते।
मूलगुणों अरु उत्तरगुण में, निज चेतन को नहलाते॥
हे गुरु! तेरी महिमा को मैं, कैसे? कब तक? गा सकता।
विद्या-रूपी सागर बनकर, तुमको कब? मैं पा सकता ॥ 7॥

सूरितिलक हो गुणवन्तों के, प्रतिपल गुण से शोभित हो।
कर्त्तव्यनिष्ठ, सत्-योगी हो, परिषह से ना क्षोभित हो॥
अद्‌भुत कैसा? मुख-मण्डल पर, तप का तेज चमकता है।
विद्या गुरु को ''आर्जवता'' से, मन यह वंदन करता है ॥ 8॥

पंचम सोपान

"अहिंसा-सूत्र" गान

1. मानव तेरे अंतरंग में, करुणा का भण्डार भरा।
दानव बनकर हिंसा मतकर, यह अन्दर से सोच जरा॥
रक्षक से भक्षक बनता जो, यह मानव का काम नहीं।
धर्म कहे यह हिंसा करके, सुख का मिलता नाम नहीं॥

2. देखो! भारत भू पर कितना, भारी संकट आया है।
गौ-हिंसा अरु पशु-हिंसा ने, क्या साम्राज्य जमाया है॥
चर्म, माँस के लालच में लाखों प्राणी मारे जाते।
शरीरादि की शोभा करने, धर्म-सूत्र टाले जाते॥

3. रो-रोकर यह कहते पशु हे-मानव! मुझको मत मारो।
सुनो-सुनो! आवाज हमारी, थोड़ी सी-करुणा धारो॥
हम सब चेतन-धारी प्राणी, सब मिल जग में रहते हैं।
सब सुख के हैं इच्छुक प्राणी, यह धर्मी-जन कहते हैं॥

4. धर्म जैन हो या हिन्दू हो, चाहे हो सिख ईसाई।
मुस्लिम बौद्ध सभी में देखो! नहीं कही हिंसा भाई॥
सभी धर्म जो दया मूल है, उसकी बात बताते हैं।
नहीं मारना किसी जीव को, यही सबक सिखलाते हैं॥

5. मद्य माँस वा मधु सेवन में, नहीं अहिंसा पलती है।
मन-वच-तन में विकृति आती, वृत्ति तामसिक बनती है॥
नहीं धर्म में मन लगता है इनका सेवन जो करता।
क्रूर-भाव से धर्म भूलकर, दुर्गति पीड़ा वह सहता॥

6. तन भावों की हिंसा से वह, पाप कर्म का अर्जन हो।
हिंसा त्यागें करुणा धारें, पाप कर्म का मर्दन हो॥
पाप-कर्म से दूर हुआ जो, उसका मन सुख पाता है।
भावों की वह शुचितापूर्वक, जैन-धर्म अपनाता है॥

7. पाप बढ़े तब राष्ट्र ग्राम में, अशुभ कर्म होते दिखते।
महामारी व भूकम्पों से, लाखों जन पीड़ित दिखते॥
मानव सोचे इन दुःखों को, कौन यहाँ आ देता है?
स्वयं पाप की बलिहारी को, क्यों न समझ वह लेता है ?

8. नहीं प्राण की चिंता जिनको, आत्मधर्म की चिन्ता है।
नहिं लेते जो अभक्ष वस्तुएँ, जहाँ जीव की हिंसा है॥
शाकाहारी भोजन में भी, जो सीमा को रखते हैं।
नहीं दास, बनते जिह्वा के, साधु लालसा तजते हैं॥

9. सत् पुरुषों की धरा यहाँ जो, शुद्धाहार सदा देती।
जिसका सेवन करके मन में, जगती आध्यात्मिक ज्योति॥
गौरवशाली भारतवासी, इस धरती के गुण गाते।
नहीं वासना मन में रखकर, धर्मार्जव से सुख पाते॥

हम मोक्ष पायेंगे

दुनिया के विषयों में ना हम भूल जाएँगे।
हम जैनी भगवन् सम बनकर मोक्ष पाएँगे॥ धृ.॥

1. रोज उठेंगे जल्दी पहले मंदिर जाएँगे।
भगवन् के दर्शन से अपने कर्म खपाएँगे॥
दुनिया के ....

2. शुद्ध द्रव्य से पूजा प्रभु की रोज रचाएँगे।
प्रभुवर की भक्ति में हम झूम जाएँगे॥
दुनिया के ....

3. मुनियों की सेवा कर गुण की मेवा पाएँगे।
साधु बनकर जल्दी हम ध्यानी बन जाएँगे॥
दुनिया के ....

4. जिनवाणी को पढ़कर उसकी महिमा गाएँगे।
द्वादशांग के श्रुत में आतम को नहलाएँगे॥
दुनिया के ....

5. हिंसा तज विषयों में हम नहीं लुभाएँगे।
संयम की सुरभि से आतम-वन महकाएँगे॥
दुनिया के ....

6. बारह तप की लौं में सारे कर्म जलाएँगे।
निर्विकार बन करके वीतरागता पाएँगे॥
दुनिया के ....

7. संसार मोह को तजकर त्याग धरम अपनाएँगे।
देह छोड़ ऊपर जाकर के शिव-पद पाएँगे॥
दुनिया के ....

8. अनन्त ज्ञान व दर्शन शक्ति सुख को पाएँगे।
मोक्ष में जाकर वही रहेंगे फिर न आएँगे॥
दुनिया के ....

जग से पार उतरना है

लय - आओ बच्चों तुम्हें ....

1. महावीर के सन्देशों से, जग से पार उतरना है।
निज आतम में निश दिन हमको, वीतराग गुण भरना है॥
महावीर के ....। वंदे जिनवरं, ... वन्दे जिनवरं 2

2. महावीर की जिनवाणी में, आत्मविशुद्धि करना है।
कर्म-मैल को धोकर हमको, जिनवर सदृश बनना है॥
महावीर के ....। वंदे जिनवरं, ... वन्दे जिनवरं 2

3. मोक्ष-मार्ग में आकर हमको, रत्नत्रय को गहना है।
रत्नत्रय की महा ज्योति से, निज में प्रकाश भरना है॥
महावीर के ....। वंदे जिनवरं, ... वन्दे जिनवरं 2

4. संयम धारण करने हमको, सब पापों को तजना है।
मुनियों के सत्संग को पाकर, धर्म गुणों को धरना है॥
महावीर के ....। वंदे जिनवरं, ... वन्दे जिनवरं 2

5. अहिंसा, सत्य, अचौर्य महाव्रत, ब्रह्मचर्य को धरना है।
और परिग्रह त्यागी बनकर, दीक्षा धारण करना है॥
महावीर के ....। वंदे जिनवरं, ... वन्दे जिनवरं 2

6. मुनि बन करके ध्यान लगाकर, सामायिक को करना है।
सप्तम गुणस्थान से लेकर, शुद्धोपयोग धरना है॥
महावीर के ....। वंदे जिनवरं, ... वन्दे जिनवरं 2

7. क्षपकश्रेणि में घातिकर्म को, पूर्ण नाश वह करना है।
अरिहन्त अवस्था पाकर हमको, समवसरण से सजना है॥
महावीर के ....। वंदे जिनवरं, ... वन्दे जिनवरं 2

8. अन्तिम शुक्लध्यान से हमको, कर्म अघाति तजना है।
पूर्ण शुद्ध व सिद्ध बनें हम, मुक्ति सुपद को गहना है॥
महावीर के ....। वंदे जिनवरं, ... वन्दे जिनवरं 2

अहिंसा बोल

देश को महान बनाना है । शाकाहार अपनाना है॥
चीखते पशु करें पुकार । छोड़ो मानव मांसाहार ॥
महावीर की यह वाणी है। मानव अहिंसक प्राणी है॥
गांधीजी ने यही बताया। मैंने किसी को नहीं सताया॥
वर्षा क्यों नहीं होती है? क्योंकि हिंसा बढ़ती है॥
भूकम्प युद्ध क्यों आ रहे। क्योंकि पशु दिल कांप रहे॥
हिंसा बढ़ती जाती है। नई बीमारी आती है॥
धर्म कहाँ कब आता है ? जहाँ जीव बचाया जाता है॥

जैन धर्मी लोगों एवं पाठशाला के विद्यार्थियों के आठ नियम

1. सप्त व्यसन का त्याग (जुआ, चोरी, शिकार, मांस, शराब, परस्त्री सेवन एवं वेश्यागमन)।
2. रात्रि भोजन का त्याग (बड़े लोगों को पानी, दूध एवं दवा और छोटे बच्चों को फल की भी छूट)।
3. पानी छानकर पीना (कम से कम घर में)
4. नित्य जिनालय में वीतराग भगवान का दर्शन करना (बाहर गांव में जिनालय न होने पर घर में या अपने स्थान पर देव दर्शन विधि करें)।
5. निर्ग्रन्थ मुनि का दर्शन करना (गांव में मुनिवर न रहने पर मुनि की तस्वीर देखें)।
6. हिंसक वस्तु का त्याग करना (चमड़ा, नेलपालिश, लिपिस्टिक, रेशमी वस्त्रादि)
7. निर्माल्य वस्तु का त्याग करना (घर में या मंदिर में पूजा हेतु समर्पित की वस्तु के खाने, बेचने का त्याग)।
8. रागी देवी-देवताओं को नमस्कार का त्याग (अस्त्र, शस्त्र और वस्त्र वाले देव देवियों को नमन नहीं करना)।

नोट : कोई भी नियम ठीक से न पलने पर या भूल हो जाने पर निर्ग्रन्थ गुरु (मुनि) महाराज से प्रायश्चित्त लेना चाहिए।

जैन गान

1. हम सब सच्चे जैन बनेगें।
2. सप्त व्यसन का त्याग करेंगे।
3. रात्रि भोजन नहीं करेंगे।
4. बिना छना जल नहीं पिएँगे।
5. जिनवर दर्शन रोज करेंगे।
6. मुनिवर का सम्मान करेंगे।
7. हिंसक वस्तु काम न लेंगे।
8. निर्माल्य सेवन नहीं करेंगे।
9. माता-पिता का मान रखेंगे।
10. सम्यग्दर्शन प्राप्त करेंगे।
11. रागी देवता नहीं भजेंगे।
12. पंच पाप का त्याग करेंगे।
13. परमेष्ठी का ध्यान करेंगे।
14. जिनवाणी का ज्ञान करेंगे।
15. सप्त तत्त्व पहचान करेंगे।
16. चार तरह के दान करेंगे।
17. तीर्थक्षेत्र का दर्श करेंगे।
18. समवसरण को प्राप्त करेंगे।
19. पूजन-भक्ति खूब करेंगे।
20. साधु पद को प्राप्त करेंगे।
21. निज आतम में ध्यान करेंगे।
22. फिर हम सब भगवान बनेंगे।

जिनवाणी स्तुति

तीर्थंकर की निश-दिन जय हो, जय जिनवाणी माता।
जय मुनिवर की, जैन धर्म की, गाते हम गुण गाथा ॥ 1॥

पूजा भक्ति करते नित हम, सब दुःख है मिट जाता।
दया धर्म का पालन करते, जग सुख-मय है भाता ॥ 2॥

पंच पाप का त्याग करें हम, पाप-कर्म भग जाता।
त्याग, दान व संयम पथ से, पुण्य कोष भर जाता ॥ 3॥

ध्यान लगाकर आतम में जो-योगी बन रम जाता ।
कर्म काटकर प्राणी ऊपर-जाता शिवपद पाता ॥ 4॥

सब जीवों की कल्याणी है, यह जिनवाणी माता।
शरण पाऊँ माता मैं तेरी, गुण गाऊँ रख माथा ॥ 5॥

जय हे ! जय हे ! जय हे !
जय जय जय जय हे !
जय जिनवाणी माता !
● जिनवाणी माता की जय ●

गुरुवन्दन

जय जिन सन्मति वीर महान, मोक्ष प्रदायक नित वंदन।
श्री शान्तिसागर सूरि प्रधान, शिव पथ दर्शक मम वंदन ॥

श्री ज्ञानसागर सूरि प्रणाम, महाकवि तव मार्ग परम।
गुरु विद्यार्णव सूरि नमोस्तु, रत्नत्रय आराध्य परम ॥

पाठशाला हेतु नियम

(प्रतिदिन के लिए एक-एक नियम)

1. बाजार में बनी आहार वस्तु का त्याग।
2. जमीकंद (कंदमूल) का त्याग।
3. रात्रि में पानी पीने का भी त्याग।
4. मौन से भोजन का नियम।
5. दही या छांछ का त्याग।
6. अचार या मुरब्बा का त्याग।
7. पिक्चर (सिनेमा) व चित्रहार का त्याग।
8. णमोकार की माला फेरने का नियम।
9. पूरा भक्तामर पढ़ने का नियम।
10. चाय या बिस्कुट का त्याग।
11. काफी या चाकलेट का त्याग।
12. दिन में शयन का त्याग।
13. जमीन या पाटा पर बैठकर भोजन करना।
14. आधा घण्टा पुराण (शास्त्र) पढ़ना या सुनना।
15. सामायिक पाठ पढ़ना/सुनना।
16. आलोचना पाठ पढ़ना/सुनना।
17. केला या अंगूर का त्याग।
18. सेव का त्याग।
19. चीकू या नीबू का त्याग।
20. मिठाई या बूंदी का त्याग।

21. खटाई या इमली का त्याग।

22. मलाई या खीर का त्याग।

23. कार में बैठने का त्याग।

24. मोटर साइकिल पर बैठने का त्याग।

25. सोफा सेट पर बैठने का त्याग।

26. गद्दी पर सोने, बैठने का त्याग।

27. शक्कर या गुड़ का त्याग।

28. आज दो ही बार भोजन करना।

29. पपीता या सीताफल का त्याग।

30. आज के आहार के साथ एक मात्र ही फल खाने का नियम।

31. आज के आहार के साथ एक मात्र ही सब्जी खाने का नियम।

पूजन हेतु पुञ्ज

– % नमः सिद्धेभ्यः

○ ○ ○ ○ ○ – णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं..........

○ ○ ○ ○ – प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः

○ ○ ○ – सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्राय नमः

卐 – शुभमस्तु

पुञ्ज चढ़ाने के उपरान्त अर्घ चढ़ायें नमोस्तु करें एवं जिन गन्धोदक ग्रहण करें।

भक्ष्य पदार्थों की मर्यादाएँ

क्र.	पदार्थ	शीत ऋतु अगहन से फाल्गुन	ग्रीष्म ऋतु चैत्र से आषाढ़	वर्षा ऋतु श्रावण से कार्तिक
1.	शक्कर का बूरा	1 माह	15 दिन	7 दिन
2.	दूध (दूहने के पश्चात) दूध (उबालने के पश्चात्)	2 घड़ी 8 पहर	2 घड़ी 8 पहर	2 घड़ी 8 पहर
3.	दही (गर्म दूध का)	8 पहर	8 पहर	8 पहर
4.	छाछ (बिलोते समय पानी डालें) छाछ (पीछे पानी डालें तो)	4 पहर 2 घड़ी	4 पहर 2 घड़ी	4 पहर 2 घड़ी
5.	आटा (सर्व प्रकार)	7 दिन	5 दिन	3 दिन
6.	मसाले पिसे हुए	7 दिन	5 दिन	3 दिन
7.	नमक पिसा हुआ नमक मसाला मिला दें तो	2 घड़ी 6 घंटे	2 घड़ी 6 घंटे	2 घड़ी 6 घंटे
8.	खिचड़ी,रायता, कढ़ी, तरकारी, रोटी	2 पहर	2 पहर	2 पहर
9.	पूरी, हलवा, बड़ा आदि	4 पहर	4 पहर	4 पहर
10.	मौन वाले पकवान	8 पहर	8 पहर	8 पहर
11.	बिना पानी के पकवान	7 दिन	5 दिन	3 दिन
12.	मीठे पदार्थ मिला दही	2 घड़ी	2 घड़ी	2 घड़ी
13.	गुड़ मिला दही, छाछ और द्विदल	सर्वथा अभक्ष्य		
14.	घी, तेल एवं गुड़	जब तक स्वाद न बिगड़े		

एक घड़ी–24 मिनट की और 1 पहर–3 घंटे का होता है

साभार – आहार विधि

सूतक विधि

सूतक में देव शास्त्र गुरु का पूजन प्रक्षालनादिक तथा मंदिर जी की जाजम वस्त्रादि को स्पर्श नहीं करना चाहिए। सूतक का समय पूर्ण होने के बाद पूजनादि पात्रदानादि करना चाहिए।

1. जन्म का सूतक दस दिन तक माना जाता है।
2. यदि स्त्री का गर्भपात (पांचवें, छठे महीन में) हो तो जितने महीने का गर्भपात हो उतने ही दिन का सूतक माना जाता है और गुरु (निर्ग्रन्थ) से प्रायश्चित्त ग्रहण करना चाहिए।
3. प्रसूति स्त्री को 45 दिन का सूतक होता है, कहीं-कहीं चालीस दिन का भी माना जाता है। प्रसूति स्थान एक मास तक अशुद्ध रहता है।
4. रजस्वला स्त्री चौथे दिन पति के भोजनादि के लिये एवं दूर से देव दर्शन हेतु शुद्ध होती है। परन्तु देव पूजन, पात्रदान के लिए छठे दिन शुद्ध होती है। व्यभिचारिणी स्त्री को सदा ही सूतक रहता है।
5. मृत्यु का सूतक तीन पीढ़ी तक 12 दिन माना जाता है। चौथी पीढ़ी में छह दिन का, पांचवी छठी पीढ़ी तक चार दिन का, सातवीं पीढ़ी में तीन, आठवीं पीढ़ी में एक दिन-रात, नवमीं पीढ़ी में स्नान मात्र में शुद्धता हो जाती है।
6. आत्मघात का सूतक घर वालों को छह महीने कहा गया है। इस प्रसंग में निर्ग्रन्थ गुरु के प्रायश्चित्तादिक द्वारा अपने व्रत धर्म की शुद्धि अवश्य करें।
7. जन्म और मृत्यु का सूतक गोत्र के मनुष्य का पांच दिन का होता है। तीन दिन के बालक की मृत्यु का एक दिन का, आठ वर्ष के बालक की मृत्यु का तीन दिन तक का माना जाता है और इसके आगे बारह दिन का।
8. अपने कुल के किसी गृहस्वामी का सन्यासमरण या किसी कुटुम्बी का संग्राम में मरण हो जाय तो एक दिन का सूतक माना जाता है।
9. यदि अपने कुल का कोई देशान्तर में मरण करे और बारह दिन के पहले खबर मिले तो शेष दिनों का ही सूतक मानना चाहिए। यदि बारह दिन पूर्ण हो गए हों तो स्नान मात्र तक सूतक जानना चाहिए।
10. गौ, भेंस, घोड़ी आदि पशु अपने घर में जन्मे तो एक दिन का सूतक और घर के बाहर जन्मे तो सूतक नहीं होता।
11. बच्चा हुए बाद भैंस का दूध 15 दिन तक, गाय का दूध 10 दिन तक, बकरी का दूध 8 दिन तक अभक्ष्य (अशुद्ध) होता है। देश भेद से सूतक विधान में कुछ न्यूनाधिक भी होता है। परन्तु शास्त्र की पद्धति अनुसार की सूतक मानना चाहिए।

साभार - पूजन पुस्तक

आरती

(प.पू. मुनि श्री 108 आर्जवसागर जी महाराज की)

श्रावकों द्वारा रचित

जय-जय गुरुवर भक्त पुकारे आरती मंगल गाएं।
करके आरती आर्जवसागर जी की, मोह तिमिर नश जाए।
गुरुवर के चरणों में नमन, गुरुवर के चरणों में नमन ॥ टेक॥

फुटेराकलाँ में जन्म लिया था, धन्य है माया माता,
शिखरचंदजी पिता तुम्हारे, हर्षित मन मुस्कराता,
नगर में सब जन मंगल गाएं,
नगर में सब जन मंगल गाएं, फूले नहीं समाएं,
करके आरती .... ॥ 1 ॥

सूरज-सा था तेज आपका, नाम पारसचंद पाया,
बीता बचपन आई जवानी, घर से मन अकुलाया,
ये सब कुछ तो नाशवान है
ये सब कुछ तो नाशवान है, भाव विराग जगाए,
करके आरती .... ॥ 2 ॥

विद्यासागर गुरुवर ने ये दीक्षा दे उद्धारा,
देख के मन की निर्मलता को, आर्जवसागर कह पुकारा,
चारित्र-रथ पर चढ़ गए गुरुवर,
चारित्र-रथ पर चढ़ गए गुरुवर, मुक्ति वाट निहारे।
करके आरती .... ॥ 3 ॥

धन्य है जीवन, धन्य है तन मन, मिलकर जो गुण गाएं,
स्वर्ग सम्पदा सब कुछ पाकर, मनुज जन्म फल पाएं।
दिव्य ज्ञान तुमसे हम पाकर,
दिव्य ज्ञान तुमसे हम पाकर, लोक शिखर पा जाएं,
करके आरती .... ॥ 4 ॥